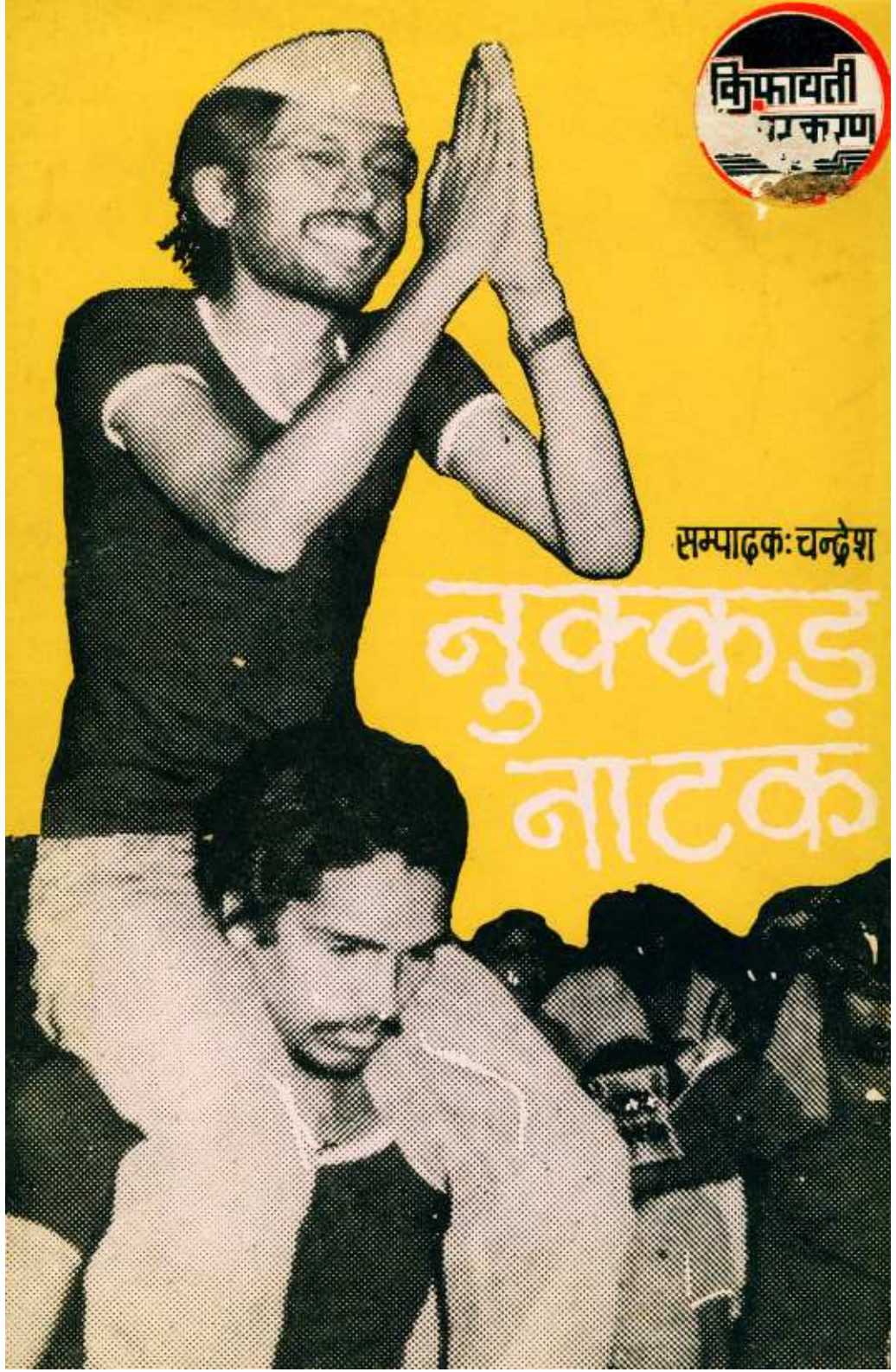

किफ़ायती
करण

सम्पादक: चन्द्रेश

नुक्कड़ नाटक

दूसरे विश्व-युद्ध के बाद **इप्टा** जैसे नाट्य-आन्दोलनों के माध्यम से तथा आज़ादी के बाद **पृथ्वीराज कपूर, शम्भू मित्र, तोप्पिलभासी** व **उत्पल दत्त** आदि के प्रयत्नों से रंगमंच को उसके बँधे-बँधाये मुहावरे से बाहर निकालने और जन-सामान्य की क़रीबी ज़रूरतों से जोड़ने की जो सार्थक कोशिशें शुरू की गयी थीं, उसका अधुनातन विकसित रूप नुक्कड़-नाटक के रूप में सामने आया है। यह एक ऐसा रंग-शिल्प है जो रंगमंच की बंधी-बंधाई मर्यादाओं को तोड़ता है और उसे अख़बार या पोस्टर की संप्रेषणीयता के निकट लाता है। नुक्कड़-नाटक के प्रारंभिक सूत्र तो देश-विदेश के विभिन्न लोकनाट्य-रूपों में भी पाये जा सकते हैं, किन्तु उसका पूर्ण विकसित रूप देश-काल की वर्तमान परिस्थितियों का प्रतिफलन है। पश्चिम के 'रेबू' और अपने यहाँ के 'फ़ार्स' या 'नक़ल' को इसके पूर्वरूप के बतौर उद्धृत किया जा सकता है। रंग-प्रस्तुति को सर्वसुलभ बनाने, पत्रकारिता के समक्ष खड़ा करने या 'प्रोटेस्ट' का सशक्त माध्यम बनाने में जहाँ नुक्कड़-नाटक की प्रभावी भूमिका सिद्ध हुई है, वहीं जन-चेतना को विकसित और परिष्कृत करने का भी वह एक सशक्त माध्यम स्वीकार किया गया है।

नुक्कड़-नाटक के इस प्रथम पुस्तकाकार संग्रह में चार बहुचर्चित नाटक **सवा सेर गेहूँ**, **गिरगिट, औरत** और **जनता पागल हो गयी है** मंच प्रस्तुतियों के कुछ विशिष्ट छायाचित्रों के साथ प्रस्तुत किये गये हैं। इसके सम्पादक **चन्द्रेश** का रंगमंच से क़रीबी रिश्ता है और वे भागलपुर के **दिशा : जन-सांस्कृतिक मंच** से सम्बद्ध हैं। नुक्कड़-नाटकों का यह संग्रह न केवल रंगमंच से जुड़े लोगों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा बल्कि उन लोगों के लिए भी इसकी एक निश्चित सार्थकता है, जो अभिव्यक्ति के विभिन्न माध्यमों को 'सुपर स्ट्रक्चर' मानकर उनका उपयोग समय की आवश्यकताओं के अनुसार करते हैं।

—सुरेश सलिल

किफायती संस्करण
22 रुपये

नुक्कड़ नाटक

चन्द्रेश

राधाकृष्ण

1983
©
चन्द्रेश
भागलपुर

प्रथम संस्करण
1983

मूल्य
22 रुपये

किफायती संस्करण
6 रुपये 80 पैसे

प्रकाशक
राधाकृष्ण प्रकाशन
2/38 अंसारी रोड, दरियागंज
नई दिल्ली-110002

मुद्रक
कमल प्रिंटर्स
9/5866, सुभाष मौहल्ला 2
गांधीनगर, दिल्ली-110031

...उन तमाम संस्थाओं को जो नुक्कड़ नाटक को आन्दोलन का रूप देने के लिए कृत संकल्प हैं।

भूमिका

पिछले कुछेक वर्षों के दौरान देश की शोषित, पीड़ित जनता की आशा-अकांक्षाओं और देश-भर में चल रहे विभिन्न जन-आंदोलनों से तादात्म्य स्थापित कर जिस कला-माध्यम ने समाज के विभिन्न तबक़े के लोगों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया है, वह है—नुक्कड़ नाटक ।

और, एक छोटी-सी अवधि में ही इस सशक्त नाट्य-विधा ने सांस्कृतिक हलचलों की दुनिया में अपनी एक अलग पहचान बनायी है । रंगशिल्प की यह अधुनातन विधा राष्ट्रीय स्तर पर व्याप्त सांस्कृतिक सन्नाटे को तोड़ती हुई जंगल की आग की तरह देश के कोने-कोने में फैलती जा रही है । नुक्कड़ नाटक में जन-सामान्य की असाधारण हिस्सेदारी और इसकी बढ़ती लोकप्रियता आकस्मिक नहीं है, शायद आज के समय की यह माँग है, उसकी अनिवार्यता और उसकी नियति है । इसलिए इन दिनों नाटकों के जनवादीकरण के साथ-साथ आगे के लिए कई नयी संभावनाएँ जन्म ले रही हैं और आम लोग स्वयं को इससे जुड़ा हुआ महसूस करने लगे हैं । साथ ही, सामाजिक बदलाव में अपनी भूमिका, हिस्सेदारी का जीवित अहसास भी उन्हें होने लगा है ।

साहित्य, कला के क्षेत्र में 'कला, कला के लिए' का ढोल पीटने वालों की नीयत बिलकुल साफ़ थी—देश की बहुसंख्यक जनता को सांस्कृतिक हलचलों की मुख्य धारा से काटकर अलग-अलग रखना । इसी प्रकार अपने वर्गीय संस्कार के कारण नाटक से जुड़े रंगकर्मी गाँव-टोलों, मज़दूर-बस्तियों के अपढ़ लोगों के बीच जाने से कतराते रहे हैं । ऐसे रंगकर्मी सामान्य जन-जीवन से जुड़ने, यथार्थ को नज़दीक से देखने की ज़रूरत ही नहीं समझते, क्योंकि उनके दिमाग़ में रंगकर्मी होने का अर्थ 'विशेष' या 'सामान्य से भिन्न' होना है । ऐसे में स्वाभाविक है कि उनके द्वारा प्रस्तुत कार्यक्रमों में न तो आम लोगों की हिस्सेदारी हो पाती है, न यथार्थ से उनका कोई सरोकार पाता है । विपरीत इसके, नुक्कड़ नाटक से जुड़े

रंगकर्मी गाँव-क़स्बे, टोले-मुहल्ले में रहने वाले लोगों के बीच जाते हैं, वहाँ के लोगों से जुड़ते-सीखते हैं और उनसे सीधे संवाद करते हैं।

नुक्कड़ नाटक सिर्फ़ नाटक नहीं, संघर्षशील समसामयिक जन-जीवन का जीवन्त दस्तावेज़ है। नुक्कड़ नाटक के लगातार लोकप्रिय होने और व्यापकतम जन-समुदाय तक पहुँचने के कारण सांस्कृतिक गतिविधियों पर मुटठी-भर लोगों की इजारेदारी का मिथक भी अब टूटता जा रहा है। ऐसे में नाटक को कला-विलास के रूप में इस्तेमाल करने वाले कलावादियों द्वारा नुक्कड़ नाटक के ख़िलाफ़ विषवमन अस्वाभाविक नहीं; क्योंकि, मुटठी-भर सफ़ेदपोश दर्शकों की मिज़ाजपुर्सी के लिए हज़ारों रुपये की लागत से तैयार भव्य सेट, ताम-झाम तथा घिसे-पिटे 'चमत्कारी' मंच-नाटकों की तुलना में बिना लागत से तैयार नुक्कड़ नाटक न केवल लोकप्रियता बल्कि कथ्य, भाषा, शिल्प और कलात्मकता में भी आगे निकलता जा रहा है।

जन-नाट्य-आंदोलन के रूप में नुक्कड़ नाटक के लगातार बढ़ते प्रभाव के पीछे निश्चित तौर पर हमारे लोक-नाटकों की सुदीर्घ एवं स्वस्थ परम्परा की प्रेरणा रही है। लोक-नाटकों में शुरू से ही आम जनता की ज़बरदस्त हिस्सेदारी रही है। जनता की सीधे हिस्सेदारी एवं सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति सचेत लोक-नाटक, न केवल हमारी सांस्कृतिक धरोहर हैं बल्कि, गतिशील जीवनधारा में विभिन्न कालखंडों में समयानुकूल परिवर्तन के साथ विभिन्न रूपों में आज भी जीवित, लोकप्रिय हैं।

भारत के राष्ट्रीय मुक्ति संग्राम के दौरान विभिन्न सांस्कृतिक दलों ने गीत-संगीत, नाटकों को पुनः जनता से जोड़कर ब्रिटिश साम्राज्यवाद के ख़िलाफ़ संघर्ष में उल्लेखनीय भूमिका निभायी। ख़ासकर 'इप्टा' (इंडियन पीपुल्स थियेटर एसोसियेशन) ने लोक-नाट्य-शैलियों का भरपूर उपयोग करते हुए विभिन्न सम-सामयिक विषयों से सम्बन्धित नाटकों के माध्यम से राष्ट्रीय स्तर पर साम्राज्यवाद के ख़िलाफ़ जनमानस तैयार करने के साथ-साथ स्वस्थ सांस्कृतिक मूल्यों की स्थापना का ऐतिहासिक काम किया।

इस तरह पारंपरिक लोक-नाटकों से लेकर आधुनिक नाटकों की प्रगतिशील धारा नुक्कड़ नाटक के उत्स माने जा सकते हैं। लेकिन नुक्कड़ नाटक के जन्म, विकास और लगातार विस्तार पाने का सबसे बड़ा कारण है—सामाजिक परि-स्थितियों में अंतर्निहित बौखलाहट, उद्वेलन और इन सबसे उत्पन्न अकुलाहट के साथ अपनी ज़मीन से जुड़ने का भाव। इसी अर्थ में नुक्कड़ नाटक लोक-नाटकों से भिन्न अपनी पृथक, स्वतंत्र पहचान बनाते हैं। नुक्कड़ नाटक वैज्ञानिक चिंतन से लैस राष्ट्रीय स्तर पर जन-संस्कृति की स्थापना के लिए प्रतिबद्ध हैं। इसलिए, देश के किसी कोने में खेले जा रहे ऐसे नाटकों में भाषा, शैली आदि के अलावा

'फ़ार्म' और 'कान्टेन्ट' के स्तर पर कोई मूलभूत फ़र्क देखने को नहीं मिलता। यही कारण है कि किसी प्रदेश-विशेष में किसी लेखक द्वारा या नाट्य-दल द्वारा सामूहिक रूप से लिखित नुक्कड़ नाटक का मंचन देश के विभिन्न इलाक़ों में होता है। कारण स्पष्ट है—उद्देश्य की समानता। यही कारण है कि क्षेत्र-विशेष की क्षेत्रगत समस्याओं के बावजूद नुक्कड़ नाटक थोड़े-बहुत फेर-बदल के साथ दूसरे क्षेत्रों में भी आसानी से खेले जा सकते हैं—'फ़ार्म' का यह लचीलापन नुक्कड़ नाटक की एक ख़ास बात है।

पुस्तकाकार में पहली बार प्रकाशित नुक्कड़ नाटकों के इस संग्रह का मुख्य उद्देश्य समकालीन रंगकर्म के क्षेत्र में एक नया मानदंड उपस्थित कर तेज़ी से उभर रहे एक नये रंगशिल्प को सामने लाना तो है ही; साथ ही, अच्छे नाट्यालेखों के अभाव में चाहकर भी काम नहीं कर पाने वाली विभिन्न नाट्य-संस्थाओं को स्थायी महत्व के नुक्कड़ नाटक उपलब्ध कराने की दिशा में भी एक विनम्र प्रयास है—प्रस्तुत संग्रह।

यों तो किसी क्षेत्र-विशेष अथवा राष्ट्रीय स्तर पर तात्कालिक ज़रूरतों के मुताबिक़ पिछले दिनों काफ़ी नुक्कड़ नाटक लिखे गये हैं, लिखे जा रहे हैं। लेकिन इस संग्रह में हिंदी के सर्वाधिक चर्चित नुक्कड़ नाटकों को शामिल किया गया है, जो पिछले कुछेक वर्षों के भीतर जाने कितनी ही बार खेले गये हैं, और आज भी खेले जा रहे हैं।

आज से कोई पाँच दशक पूर्व लिखी गयी प्रेमचंद की कहानी 'सवा सेर गेहूँ'—सामाजिक अंधविश्वासों, रूढ़ियों-आडम्बरों में जकड़े ग्रामीण समाज एवं महाजनी चंगुल में फँसे किसानों द्वारा बँधुवा मज़दूरी करने की विवशता न केवल तत्कालीन सामंती ढाँचे का जीवंत दस्तावेज़ है, बल्कि आज भी इसकी प्रासंगिकता बनी हुई है। कारण, इतने वर्षों बाद भी यह कहानी वर्तमान तथाकथित समाजवादी व्यवस्था के चरित्र का उद्घाटन करते हुए उस 'लूपहोल' की ओर संकेत करती है, जिसके कारण लाख फ़तवा देने के बावजूद बँधुवा मज़दूरी की प्रथा अब भी न केवल विभिन्न रूपों में बरक़रार है, बल्कि अमीबा की तरह फल-फूल रही है।

'सवा सेर गेहूँ' के नाट्य-रूपांतरकार राजेशकुमार ने कहानी की मूल आत्मा को सुरक्षित रखते हुए वर्तमान परिस्थितियों को ध्यान में रखकर नाटय-रूपांतर में थोड़ी-सी छूट ली है।

नाटक के बीच-बीच में लोक-नाटकों की कथा-गायन शैली का बड़ा ही ख़ूब-सूरत प्रयोग किया गया है जिससे इस नुक्कड़ नाटक की संप्रेषणीयता और जीवंतता काफ़ी बढ़ गयी है।

भारतीय परिवेश को ध्यान में रखकर अंतोन चेखव की कहानी 'गिरगिट' का रमेश उपाध्याय द्वारा किया गया नाट्य-रूपांतर इतना जीवंत बन पड़ा है

कि दर्शकों को यह नुक्कड़ नाटक देखकर ज़रा भी अहसास नहीं होता कि इसकी कहानी कहीं से भी भारतीय परिवेश में मिसफ़िट है। 'गिरगिट' में अफ़सरशाही के लिजलिजेपन, आम आदमी पर उसके धौंस-खौफ़ एवं गिरगिटी चरित्र पर तीखा व्यंग्य है। लोक-नाट्य-शैली के पुट ने इस नुक्कड़ नाटक के प्रभाव को काफ़ी बढ़ा दिया है। साथ ही दर्शक की मनोरंजकता का पूरा-पूरा खयाल रखते हुए नाट्य-रूपांतरकार ने हास्य को कहीं भी व्यंग्य पर हावी नहीं होने दिया है।

वर्तमान पूँजीवादी ढाँचे की सामाजिक-आर्थिक विसंगतियों के दुश्चक्र में फँसी जीवन की विभिन्न स्थितियों में गुज़रती आम भारतीय औरतों की करुण गाथा को जन नाट्य-मंच (दिल्ली) द्वारा सामूहिक रूप से लिखित नुक्कड़ नाटक 'औरत' में एक सर्वथा नये शिल्प में प्रस्तुत किया गया है। यही कारण है कि यह नुक्कड़ नाटक दर्शकों के मर्म को तीव्रता से न केवल छूता है, वरन वर्तमान सामाजिक ढाँचे के चरित्र को कारगर ढंग से बेपरदा करने के साथ-साथ संघर्ष की भी ज़मीन तैयार करता है—जो औरतों की आज़ादी का एकमात्र रास्ता है।

एक ही पात्र द्वारा विभिन्न भूमिका अदा करने की टेकनीक का इस नुक्कड़ नाटक में अत्यंत ही सफल प्रयोग किया गया है।

शिवराम द्वारा प्रतीकात्मक शैली में लिखा गया 'जनता पागल हो गयी है' हिंदी के चर्चित नुक्कड़ नाटकों में से एक है। इसमें वर्तमान अवसरवादी राजनीति, लालफ़ीताशाही तथा सरकारी तंत्र पर धन्ना सेठों के कसते फ़ौलादी शिकंजे तथा आम जनता के क्रूर शोषण एवं उन्हें 'वोट बैंक' के रूप में इस्तेमाल करने वालों की कुत्सित प्रवृत्ति पर करारी चोट की गयी है। तेज़ी से बदल रही परिस्थितियों में एक अरसे से शोषित-पीड़ित जनता अपने अधिकारों के प्रति सचेत होकर जब संघर्ष पथ पर उतरती है तो उसे पागल क़रार दिया जाता है।

सत्ता और पूँजीपतियों के गठजोड़ एवं धूर्त राजनेताओं के दोहरे चरित्र को इस नुक्कड़ नाटक में बड़े ही कलात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। छोटे-छोटे, तल्ख एवं चुस्त संवादों वाला यह नुक्कड़ नाटक ऐक्शन से भरपूर है, जो नुक्कड़ नाटक की एक अनिवार्य शर्त है।

नुक्कड़ नाटक की बढ़ती लोकप्रियता ने पिछले दिनों कुछेक सवालों को भी जन्म दिया है, जिन पर यहाँ विचार करना प्रासंगिक होगा।

कुछ लोगों द्वारा नुक्कड़ नाटक को महज़ नाट्य-प्रयोग मानना या तो एक प्रकार की चालाकी है या फिर ग़लत समझदारी का परिणाम। यह ठीक है कि प्रयोग के बग़ैर परिणाम या निष्कर्ष तक नहीं पहुँचा जा सकता। लेकिन प्रयोग का सामाजिक संदर्भ में कोई प्रयोजन न हो, इसके पीछे कोई स्वस्थ चिंतन न हो तो वैसा प्रयोग स्वाभाविक रूप से सिर्फ़ भ्रम पैदा करेगा, जबकि नुक्कड़ नाटक के जन्म के पीछे वर्तमान सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परि-

स्थितियाँ सक्रिय रूप से कार्यरत रही हैं। इन्हीं के बीच से उपजा जो मानवीय बोध विकसित हुआ है उसी का परिणाम है नुक्कड़ नाटक। स्वभावतः यह मानवीय बोध वर्तमान सामाजिक संरचना के टूटने की ख़बर देता है और आने वाले सामाजिक ढाँचे के लिए ज़मीन तैयार करना चाहता है। शायद यही कारण है कि 'नाटकों' में अब तक नायकों या पात्रों या व्यक्तियों की मुख्यता रही थी। ठीक इसके विपरीत, नुक्कड़ नाटकों में 'समूह' उभरता, उमड़ता नज़र आता है, जिसमें व्यक्ति गौण है।

नुक्कड़ नाटक पर एक सीमा में बंद होने जैसी बातें भी सुनने को मिल रही हैं। यह बात एक हद तक सही है और इससे बचने की ज़रूरत है। लेकिन एक खास समय में हर साहित्यिक, सांस्कृतिक विधा की एक सीमा हुआ करती है। किसी भी नयी विधा का उत्तरोत्तर विकास एवं उसमें विविधता एक लम्बी प्रक्रिया का परिणाम होता है। सामाजिक बदलाव तथा नये मूल्यों की स्थापना के साथ सीमाएँ बनती-टूटती हैं। नुक्कड़ नाटक को भी इसी परिप्रेक्ष्य में देखने की ज़रूरत है।

नुक्कड़ नाटक के संदर्भ में राजनीति से प्रेरित होने या प्रोपेगैंडा का सवाल भी उछाला गया है। निश्चय ही नुक्कड़ नाटक को नारेबाज़ी या राजनीतिक फ़िकरेबाज़ियों से बचाने की ज़रूरत है। लेकिन हमें इस संदर्भ में प्रेमचंद के शब्दों को भूलना नहीं होगा, 'प्रोपेगैंडा बदनाम शब्द है लेकिन आज का विचारोत्तेजक, बलदायक, स्वास्थ्यवर्द्धक तमाम साहित्य एवं कला प्रोपेगैंडे के सिवाय कुछ नहीं है, न हो सकता है, न होना चाहिए...।'

नुक्कड़ नाटक के बढ़ते प्रभाव एवं इसकी लोकप्रियता अब व्यवस्था के लिए एक चुनौती बनती जा रही है। यही कारण है कि पिछले दिनों देश-भर में अनेकों जगहों पर नुक्कड़ नाटक से जुड़े रंगकर्मियों पर सरकारी तंत्र के दमन और उन्हें तरह-तरह से परेशान करने की कई घटनाएँ सामने आ चुकी हैं। स्पष्ट है कि संप्रेषण का कोई कारगर माध्यम जब जनता के बीच व्यवस्था-विरोधी तेवर के साथ महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने लगता है तो व्यवस्था या तो उसे अपने हित में प्रयोग करने की कुचेष्टा रचती है या फिर उसे अपनी निरंकुशता की चपेट में लेने की कोशिश करती है। अतः मेरा विश्वास है कि व्यवस्था का नुक्कड़ नाटक के प्रति यह कठोर रवैया उसके लिए वरदान ही सिद्ध होगा। और, मौजूदा हालात में न केवल जन-संवाद के सशक्त माध्यम के रूप में नुक्कड़ नाटक सबसे अनुकूल, मौजूँ सिद्ध होगा, अपितु राष्ट्रीय स्तर पर जन-संस्कृति के गहराते संकट का मुक़ाबला करने में नुक्कड़ नाटक ही सक्षम होगा।

प्रस्तुत संग्रह नुक्कड़ नाटक से जुड़े विभिन्न पक्षों को सामने लाने एवं इससे जुड़े कई प्रकार के भ्रम को भी दूर करने में सहायक हो सकेगा, ऐसा विश्वास

किया जा सकता है।

अंत में मैं आभार प्रकट करता हूँ—

—उन तमाम लेखकों एवं नाट्य-रूपांतरकारों के प्रति, जिन्होंने कृपापूर्वक इस संग्रह के लिए अपने नुक्कड़ नाटकों का उपयोग करने की मुझे अनुमति दी है।

—उन संपादकों के प्रति, जिन पत्रिकाओं में ये नुक्कड़ नाटक पहले-पहल प्रकाशित हुए थे।

—अपने अभिन्न मुकुल, उदय, श्रीचंद्र, राजेश, नवल के प्रति, जिनसे संग्रह तैयार करने में हर संभव सहयोग मिला।

—डॉ० राधाकृष्ण सहाय के प्रति जिनकी नाटक व रंगमंच संबंधी सुलझी हुई दृष्टि ने मुझे हमेशा प्रभावित किया है।

—राधाकृष्ण प्रकाशन के सुयोग्य संचालक भाई अरविन्द कुमार के प्रति जिनकी रुचि एवं तत्परता के कारण इस संग्रह का प्रकाशन संभव हो पाया है।

आदमपुर,
भागलपुर-81 2001

—चन्द्रेश

A theatre which makes no contact with the public is a nonsense.

—Brecht

क्रम

सवा सेर गेहूँ	17
गिरगिट	35
औरत	49
जनता पागल हो गयी है	63

सवा सेर गेहूँ

प्रेमचंद

नाट्य-रूपांतर
राजेश कुमार

'सवा सेर गेहूँ' का प्रथम नुक्कड़-मंचन 'दिशा', भागलपुर द्वारा 15 सितंबर, 1979 को भागलपुर के स्टेशन चौक पर किया गया। इस प्रस्तुति में निम्न कलाकारों ने हिस्सा लिया :

सूत्रधार	:	अरुण कुमार
शंकर	:	राजेश कुमार
विप्र	:	चन्द्रेश
मंगल	:	श्रीचंद्र कुमार
साधु	:	रॉबिन
किसुन	:	संजय
पुरुष	:	सदन

नेपथ्य से नगाड़े की आवाज़ आती है। ज़मीन पर बैठे लोग शांत होने लगते हैं, पीछे के खड़े लोग बैठने लगते हैं, और दूर के लोग नज़दीक आने लगते हैं। नगाड़े की आवाज़ क्रमशः कम होती हुई थमती है। दर्शकों के बीच से सूत्रधार प्रवेश करता है। नमस्कार करता है।

सूत्रधार : दर्शको! अब हम नया नाटक खेलना चाहेंगे। पुराने नाटकों से एकदम अलग। शहरी बाबुओं, हाकिम-हुक्कामों के जीवन से बाहर के नाटक। अब मंच पर खेले जाने वाले नाटक, ताम-झाम वाले, तड़क-भड़क और प्रकाश-सज्जा वाले नाटक, मुझे अच्छे नहीं लगते। (**दर्शकों से**) क्या आपको अच्छे लगते हैं? आप मुझे बतायें अपने जीवन के बारे में, टोलों-मुहल्लों में, खेतों-खलिहानों में, गाँव-क़स्बों में आपके साथ जो वारदातें हो रही हैं उसके बारे में। अख़बार पर मेरा भरोसा नहीं है। संकोच मत कीजिये, मैं आपके बीच का ही आदमी हूँ। अब तक परदे के पीछे रहा हूँ। आप मुझे बतायें, मैं उन्हें सब जगह नाटक के रूप में खेलूँगा।

पुरुष : (**भीड़ से निकलकर**) आप क्या कहानी को नाटक के रूप में खेल सकते हैं?

सूत्रधार : क्यों नहीं, क्यों नहीं? कहानी, कविता, उपन्यास सब अपना रूप बदल रहे हैं और नाटक बन रहे हैं। ज़्यादा लोगों के बीच नाटक ही जा सकता है। पर किसकी कहानी, कैसी कहानी? हमें ऐसी कहानी दो जो जीवन की हो। एक साथ गाँव और शहर, यानी पूरे हिंदुस्तान की हो। क्या आपके पास कोई ऐसी कहानी है?

पुरुष : प्रेमचंद की कहानी, सवा सेर गेहूँ।

सूत्रधार : वह कहानी मैंने पढ़ी थी। बहुत पहले, जब मैं स्कूल में पढ़ता था, पर अब पूरी तरह याद नहीं है। बताओ, क्या है उस कहानी में?

पुरुष : (**लय के साथ गाता हुआ**)
सवा से' गेहूँ रे भइया
सवा सेर गेहूँ,

सवा से' गेहूँ रे भइया
सवा सेर गेहूँ।
यह गाँव के किसी एक शंकर की कहानी है,
एक सीधे-सादे किसान की कहानी है।
शंकर था सीधा-सादा रे भइया,
शंकर था सीधा-सादा।
शंकर था भोला-भाला रे भइया,
शंकर था भोला-भाला।
सबसे उसको प्रेम-मोहब्बत
सबसे उसकी दुआ-सलामी।
शंकर था सबका प्यारा रे भइया,
शंकर था सबका प्यारा।
कर्ज़ लिया था उसने गेहूँ,
केवल पाँच पउआ...

सूत्रधार : पाँच पउआ यानी सवा सेर गेहूँ ?

पुरुष : (**लय के साथ**)
हाँ रे भइया, हाँ रे भइया
सवा सेर गेहूँ।
सवा सेर गेहूँ रे भइया,
सवा सेर गेहूँ।
भाई उससे अलग हो गया
शंकर बना मजूर।
खेत गया फिर बैल बिका।

सूत्रधार : आह ! तब तो उसको बहुत-से संकटों ने आ घेरा होगा !

पुरुष : (**लय में**)
बच्चे दाने-दाने को तरसे
पत्नी लज्जा ढकने को।
आधा भूखे, आधा प्यासे
किसी तरह थे जीवन जीते।
यह सब सूद के खातिर रे भइया
यह सब सूद के खातिर।
सवा सेर गेहूँ के खातिर रे भइया
सवा सेर गेहूँ के खातिर।
इसके बदले उसने दिये कई मन गेहूँ

इसके बदले उसने दिये बहुत-से रुपये
इसके बदले उसने दे दी सारी मेहनत
इसके बदले उसने जीवन बंधक डाला
इसके बदले उसके बच्चे रोये-काने
इसके बदले उसे बुढ़ापे ने आ घेरा
इसके बदले उसकी असमय मौत हो गयी।
फिर भी कर्ज़ न उतरा रे भइया
फिर भी कर्ज़ न उतरा।

सूत्रधार : बस, बस करो। यह तो आज की हक़ीक़त है। सूदखोर सभी जगह मौजूद हैं और उनके चंगुल में आज भी शंकर क़ैद है। यहाँ भी, हाँ...हाँ, यहाँ भी। (**दर्शकों के समीप जाकर**) आप में भी कई शंकर हैं। यह तो मौजूदा हिंदुस्तान है। गाँव से लेकर शहर तक सूदखोरों का जाल फैला हुआ है और उसमें शंकर पड़ा छटपटा रहा है। इस कहानी को नाटक बनाकर क्या खेलें ? दर्शको, आप जिस दिशा में देखें, उधर ही आपको शंकर मिलेंगे। (**दूर दो-तीन आदमियों की ओर संकेत करता है।**)

सूत्रधार और पुरुष का प्रस्थान। शंकर, मंगल और किसुन का अभिनय-स्थल पर आना।

मंगल : (**देह से कपड़ा उतारकर पसीना पोंछता है। किसुन से**) जा बेटा जा, बैल को कुट्टी-सानी देने का इंतजाम कर।

किसुन : चाचा, थोड़ा सुस्ता लें। खेत में काम करते-करते थक गये हैं, चाचा !

मंगल : ये आराम-वाराम बड़कन के खातिर है। हम लोग के नसीब में यह कहाँ है ? हम लोग तो खटने के लिए पैदा हुए हैं और वे लोग मजा मारने के लिए।

शंकर : (**पुकारकर**) मंगल और किसुना, इधर आ। जा, चना-बना ले आ। और हाँ, देख लेना, रात के लिए ढिबरी में तेल है या नहीं ? अब तो जब देखो तब किरासन तेल पर ही दाम बढ़ता है।

मंगल : किरासन तेल कितना महँगा हो गया है। सुनते हैं, सरकार ने इलेक्शन लड़ने के लिए पैसा जमा किया है और पेट्रोल, गैस, मिट्टी-तेल पर दाम बढ़ा दिया है।

नेपथ्य से आवाज आती है, 'अलख निरंजन...अलख निरंजन...अलख निरंजन...!'

मंगल : लगता है, दरवाजे पर कोई आया है।

शंकर : साधु-महात्मा आये होंगे।

आवाज क्रमशः तेज होती है—'अलख निरंजन... अलख निरंजन...!'

मंगल : आकर कहीं जम न जाये। इन महात्माओं का तो बस यही धंधा है। दिन-भर कमायें-खटें हम और जटा बढ़ाकर, राख लगाकर, टीका लगाकर, मुफ्त का भोजन करने धमक जाते हैं वे।

शंकर : (**डाँटते हुए**) कैसी बातें करता है! साधु-महात्मा को कुवचन नहीं बोलते। हम लोगों का भाग है कि वे हमारे यहाँ आते हैं। साधु-महात्मा के भेस में कब भगवान दर्शन दे दें, कौन जानता है?

मंगल : दो टाइम का खाना तो हम मुश्किल से जुटा पाते हैं, उसमें ये साधु धमक जाते हैं। अरे, काम करो, मिहनत करो और खाओ। फिर हमारे यहाँ क्या है? जाना है तो उनके यहाँ जायें जिनकी बखारी भरी हुई है, हजारों मन धान-गेहूँ और चना है, सूद के हजारों-लाखों रुपये हैं। हमारे पास तो केवल दो हाथ हैं। (**दोनों हाथ ऊपर की ओर उठाता है।**)

नेपथ्य से लगातार 'अलख निरंजन' की आवाज आती है। शंकर घबड़ाता है।

शंकर : ऐ मंगल, जा साधु-महात्मा को प्रेम से साथ लेता आ।

मंगल : (**जाते हुए**) भइया, तुम खेती-बारी छोड़ो और तुम भी साधु बन जाओ। सधुअई में फायदे-ही-फायदे हैं।

शंकर की बेचैनीपूर्वक प्रतीक्षा। साधु का प्रवेश। पैर में खड़ाऊँ, सिर पर जटा, हाथ में कमंडल और चिमटा। चेहरे पर भभूत मले हुए।

शंकर : (**आह्लादित होकर**) आइये महाराज, आइये। इस घर को पवित्र कीजिये। धन्य भाग हमारे महाराज, जो आप पधारे। (**साधु के पैर छूता है।**)

साधु : (**सर पर हाथ रखते हुए**) खुश रहो, अन्न-धन्न से घर भरा रहे।

मंगल : (**अपने से**) हर साधु यही कहता है, लेकिन साधु के कहने से घर में अन्न-धन्न नहीं आ जाता है, वह तो जमींदारों, कलक्टरों और महाजनों के यहाँ है।

साधु टहलता है और लोगों के बीच घूम-घूमकर उपदेशात्मक शैली में बोलता है।

साधु : सुनो भक्तो! आज हम लोग पहले से अधिक दुखी और गरीब क्यों हैं? क्यों आज लोग तबाह हो रहे हैं? भुखमरी, आपसी-कलह, हैजा, महामारी, दंगा-फसाद क्यों हैं? क्यों आज बाजार में सब चीजों के

दाम बढ़े हुए हैं? लोग दुखी, उदास, थके हुए क्यों हैं? जवान बूढ़े क्यों दिखते हैं? यह सब धर्म को महत्व नहीं देने के चलते। अब लोग ईश्वर से प्रेम नहीं करते। यज्ञ-जाप कम होते हैं। धर्म का नाश करोगे तो तुम्हारा नाश हो जायेगा। धर्म से, पूजा-पाठ से ही सभी मुश्किलें दूर होंगी। मंत्री और जनता, जमींदार और किसान, मिल-मालिक और मजदूर, अफसर और बेरोजगार—सबके संबंधों को धर्म अकेला ठीक कर सकता है। इसलिए मंदिर बनवाओ, देवी-देवताओं की पूजा करो।

शंकर : (**गद्-गद भाव से**) महाराज, आपने कितना अच्छा कहा है!

साधु के पैर पर गिर पड़ता है। साधु शंकर को उठाता है।

साधु : विरोध किसी से नहीं करो। जिसका खेत जोतते हो, उसका कहना मानो। मनुष्य के रूप में वह भगवान है। विरोध की बात चित्त से हटा दो। सबका कहना मानो। (**गाता है**) घट-घट में हैं साईं रमता, कटुक वचन मत बोल रे...!

शंकर : ठीक कहते हैं, महाराज!

साधु : हम तो तुम लोगों को राह दिखाने आये हैं, कहीं तुम भटक नहीं जाओ। अच्छा भक्त, अब मैं चलता हूँ।

शंकर : (**विनीत स्वर में**) महाराज, आज हमारे यहाँ जूठन गिरा दीजिये। कल सबेरे चले जाइयेगा।

साधु : (**स्वगत**) भक्त की बात कैसे उठाऊँ?

शंकर : (**अनुनयपूर्वक**) कल चले जाइयेगा, महाराज!

साधु : भक्त की जैसी मरजी।

शंकर मंगल के पास आता है।

शंकर : मंगल, महाराजजी को दरवाजे पर ले जाओ। झाड़-पोंछकर खाट बिछा देना। तब महाराज आराम करेंगे, मैं भोजन का प्रबंध करता हूँ। (**मंगल और साधु के जाने के बाद**) किसुना...रे किसुना! (**भीड़ में से किसुन का प्रवेश**) अरे, मतारी कहाँ है? क्या कर रही है? जाकर कह, साधु-महाराज आये हैं, जल्दी से उनके लिए खाना बना दे।

किसुन : आज तो जौ की रोटी बनी है।

शंकर : जौ की रोटी वे कैसे खायेंगे?

किसुन : लेकिन हम तो खाते हैं।

शंकर : हम तो कुछ भी खा सकते हैं। साधु-महात्मा कैसे खायेंगे? वे तो

भगवान के अवतार हैं। (**चिंतित होकर**) अब क्या करूँ ? घर में तो गेहूँ है नहीं, जो था वह चैत में महाजन ने ले लिया। (**किसुन को पास बुलाकर**) जा, कहीं से गेहूँ का आटा उधार ले आ। जा, जल्दी से।

भीड़ में से मंगल का प्रवेश।

मंगल : (**जाते हुए किसुन से**) कहाँ जा रहा है ? इतनी तेजी से।

किसुन : (**रुककर**) गेहूँ के आटा का इंतजाम करने। (**जाता है।**)

शंकर : (**मंगल से**) जा, किसुन की माँ से कह दे, चूल्हे में आँच दे दे।

मंगल जाता है। किसुन का प्रवेश।

किसुन : कहीं नहीं मिला गेहूँ का आटा, किसी के घर नहीं।

मंगल का प्रवेश।

मंगल : देवता का भोजन भला गाँव में कहाँ से मिलेगा ? गाँव में तो सभी आदमी रहते हैं।

शंकर : (**डाँटकर**) मजाक सूझता है तुम्हें ? क्या साधु-महाराज भूखे रह जायेंगे ? सोच, कितना पाप लगेगा ! (**मंगल को पास बुलाकर**) तू यहीं रह, मैं पंडीजी के यहाँ से आ रहा हूँ। शायद उनके यहाँ मिल जाये।

शंकर का प्रस्थान।

किसुन : क्यों चाचा, तब तो हम भी आज गेहूँ की रोटी खायेंगे।

मंगल : नहीं जी, गेहूँ की रोटी सबको नहीं पचती। हम लोग जौ की रोटी खायेंगे।

शंकर का प्रवेश।

शंकर : पंडीजी के यहाँ से ले आया, सवा सेर गेहूँ। (**किसुन से**) ले जा, माँ से जाकर कह, गेहूँ जल्दी से पीस दे और तुरंत भोजन तैयार कर दे। (**थोड़ी चहलक़दमी। मंगल से**) तू इनार से एक बाल्टी पानी जल्दी से ले आ।

दोनों का दो दिशाओं में प्रस्थान। विराम। पुनः शंकर और मंगल का साथ-साथ प्रवेश।

शंकर : (**दातुन से दाँत रगड़ते हुए**) महाराजजी, अब चले गये।

मंगल : हाँ भइया, अब कहीं जाकर इस सुबह हमें फ़ुरसत मिली है।

शंकर : चलो, अब अपने काम पर चलें।

मंगल : कहाँ ?

शंकर : खेत में।

दोनों परस्पर बातें करते चले जा रहे हैं।

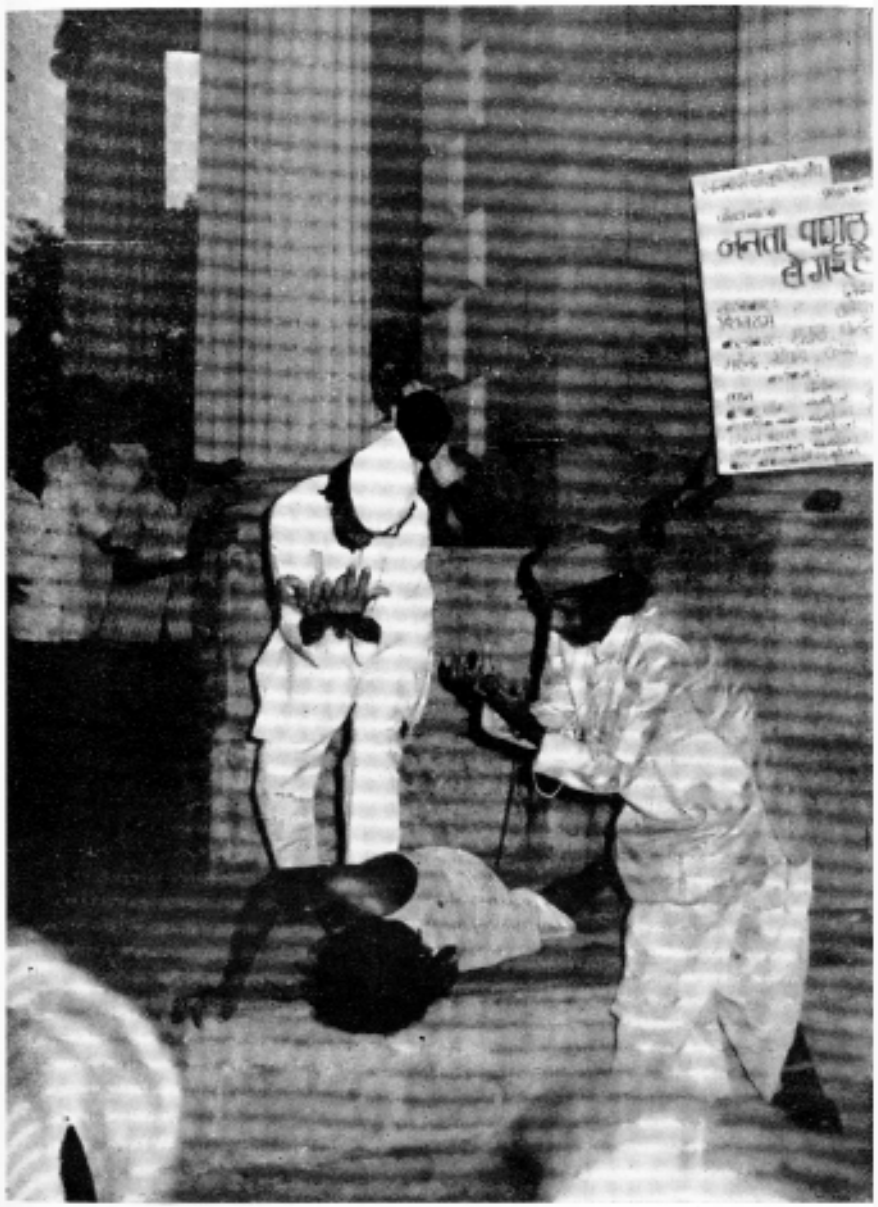

दिशा, भागलपुर की नाट्य-प्रस्तुति 'सवा सेर गेहूँ'

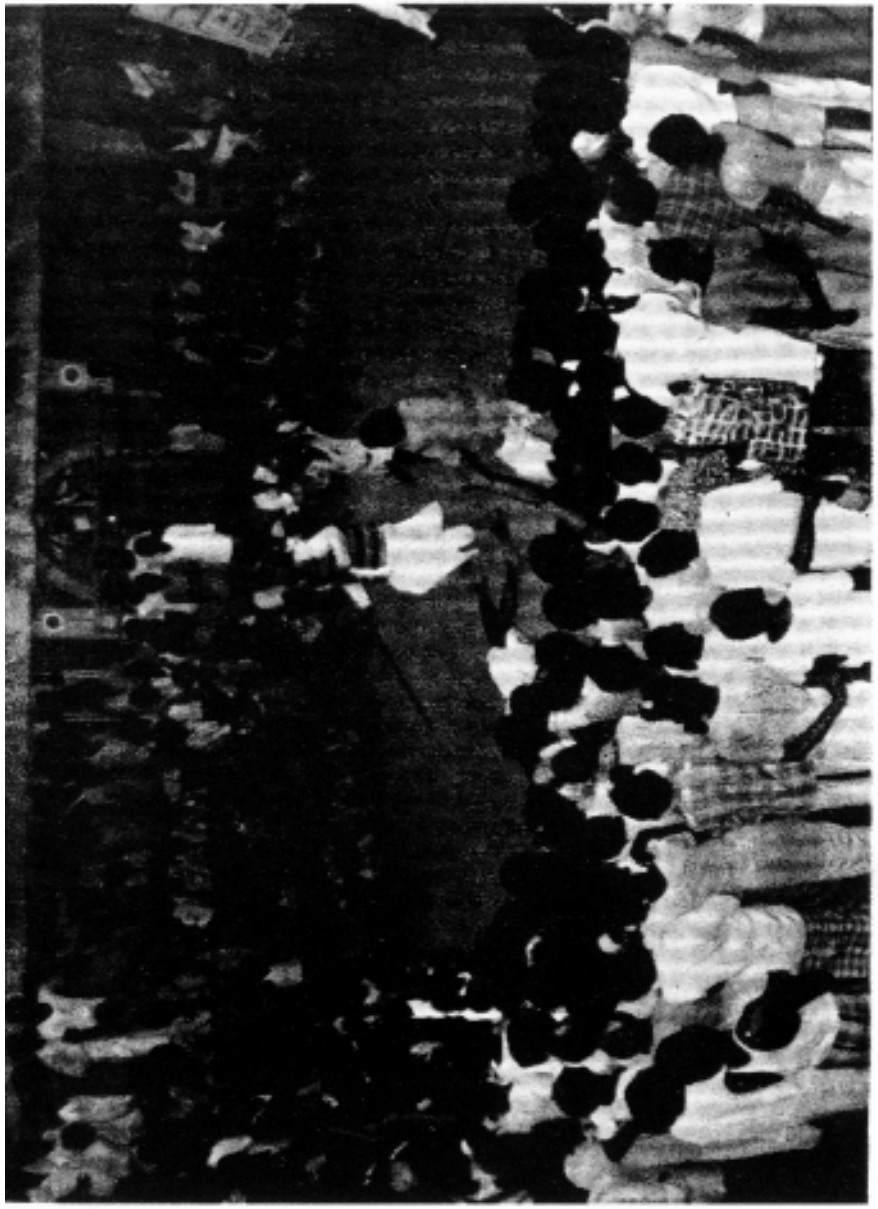

'सवा सेर गेहूँ' का एक अन्य दृश्य

मंगल : पंडीजी से जो गेहूँ उधार लिया है, उसे कब लौटाओगे ?

शंकर : अरे, सवा सेर गेहूँ क्या लौटाऊँ ? साल में दो बार खलिहानी देता हूँ सो इस बार पंसेरी के बदले कुछ ज्यादा ही दे दूँगा। वो भी समझ जायेंगे।

मंगल : चलो।

दोनों जाते हैं। विप्र का दूसरी तरफ़ से प्रवेश।

विप्र : (**स्वतः**) कितना सारा काम और अकेली मेरी जान ! आखिर कहाँ-कहाँ पूजा-पाठ कराता फिहूँ ? पूरे गाँव में पूजा कराने वाला अकेला मैं, लोगों के यहाँ पूजा कराते-कराते थककर चूर हो जाता हूँ, लेकिन दक्षिणा की बात करो तो लोग बगल झाँकने लगते हैं। अब तो लोग पूजा-पाठ भी बंद कर रहे हैं, और तो और सालों की खलिहानी देने में भी नानी मरती है। (**ऊँची आवाज़ में**) आज शंकरवा के यहाँ से बिना खलिहानी लिये नहीं आऊँगा। बड़ा चंट हो गया है। (**पुनः**) शंकरवा, रे शंकरवा !

शंकर का प्रवेश।

शंकर : पंडीजी, आपने कष्ट क्यों किया ? हम खुद खलिहानी लेकर पहुँच जाते। (**जाता है और बोरा उठाकर लाता है**) डेढ़ पंसेरी के लगभग गेहूँ है।

विप्र : ठीक है, ले चल।

शंकर विप्र के पीछे-पीछे जाता है। पुरुष का प्रवेश।

पुरुष : (**गाता है**)

सवा सेर गेहूँ रे भइया
सवा सेर गेहूँ।
इतने गेहूँ के बदले शंकर ने ज्यादा गेहूँ दे डाला।
उसने ऐसा समझा रे भइया
उसने ऐसा समझा,
हमने कर्ज उतार दिया।
इसकी उसने फिर चर्चा नहीं की
पंडीजी ने भी माँगा नहीं।
बरस पर बरस बीतते गये...
एक-दो-तीन-चार-पाँच-छह-सात
गुजर गये सात साल रे भइया
गुजर गये सात साल।

इस बीच दुनिया बदली रे भइया,
इस बीच दुनिया बदली ।
पंडीजी अब बने महाराज,
शंकर बना मजूर ।
मंगल उससे अलगा रे भइया,
मंगल उसे अलगा ।

पुरुष गाते-गाते भीड़ में चला जाता है । मंगल का भारी क़दमों से प्रवेश । उदास चेहरे से जमीन को देखता है ।

मंगल : यह जमीन मेरी है, वह भइया की । पहले हम दोनों भाई मिलकर इसे जोतते और बोते थे । अब जमीन ही नहीं, घर भी दो हैं । हम दोनों भइयों का प्रेम इस गाँव वालों से देखा नहीं गया । बढ़ा-चढ़ाकर हम लोगों को उन्होंने अलग करवा दिया । भइया रात तक रोते रहे थे और मैं भी उदास था । (**विराम**)

: अब हम इनकी चाल समझ गये हैं ।

विप्र का प्रवेश ।

विप्र : बँटवारे के बाद भाई-भाई अलग होते ही हैं । एक को दूसरे से विशेष मतलब नहीं रहता । एक रोयेगा तो दूसरा हँसेगा । एक के घर मातम होगा तो दूसरे रसगुल्ले खायेंगे । (**स्वगत**) ये लोग एक साथ रहेंगे तो फिर हमारा क्या होगा ?

मंगल : (**चीखकर**) क्या बकते हो ! बँटवारे के बाद भी तुम लोगों का मन नहीं भरा । अब क्या चाहते हो ? हम दोनों भाई लड़कर मर जायें ? (**ठहरकर**) नहीं, मैं तुम सब पाखंडियों को मारकर दम लूँगा । (**दौड़कर गरदन पकड़ लेता है ।**) मैं तुम्हें जिंदा नहीं छोड़ूँगा ।

शंकर का दौड़ते हुए प्रवेश । विप्र से मंगल को अलग करता है ।

शंकर : क्या कर रहे हो, मंगल ? पागल हो गये हो क्या ?

मंगल : हाँ, हाँ, मैं पागल हो गया हूँ । इन लोगों ने पागल बना दिया है ।

मंगल जाता है । शंकर पुकारता है । रोकने के लिए पीछे जाता है, पर वह जा चुका है । लौटकर विप्र के पास आता है ।

शंकर : पंडीजी, मंगल की ओर से मैं माफी माँगता हूँ । उसे माफ कर दीजिये । (**पाँव पकड़ता है ।**) इधर कुछ दिनों से वह ठीक नहीं चल रहा है ।

विप्र झटकता है ।

विप्र : ठीक है, ठीक है ।

दोनों का प्रस्थान । पुरुष का प्रवेश ।

पुरुष : (**गाता है**)
शंकर पड़ा बीमार रे भइया
शंकर पड़ा बीमार ।
दवा-दारू में सब-कुछ बिक गया ।
खतम हो गयी खेती ।
खतम हो गयी खेती रे भइया
खतम हो गयी खेती
जमा-थमा एक बैल रह गया
और फिर थोड़ा खेत ।
दिन-भर की मजदूरी करके
लौट रहा था शंकर एक दिन,
पंडीजी तब मिले रे भइया
पंडीजी तब मिले ।

पुरुष का प्रस्थान । शंकर काम करके थका-माँदा लौट रहा है । सामने से विप्र का प्रवेश ।

विप्र : शंकर, कल आकर अपने बीज-बैंग का हिसाब कर ले । तुम्हारे यहाँ साढ़े पाँच मन गेहूँ कब के बाक़ी पड़े हुए हैं, और तू देने का नाम नहीं लेता । पचाने का इरादा है क्या ?

शंकर : (**चौंककर**) साढ़े पाँच मन गेहूँ ! मैंने आपसे कब लिया, पंडीजी ? यह गलत है । मेरे यहाँ किसी का एक छदाम भी बकाया नहीं है ।

विप्र : (**आवेश में**) इसी झूठ का फल भोग रहे हो जो खाने को नहीं मिलता । (**समीप आकर**) आज से सात साल पहले सवा सेर गेहूँ उधार ले गये थे, याद है या नहीं ?

शंकर : (**अवाक**) हे ईश्वर ! बदले में मैंने आपको कितनी खलिहानी दी ! आपने इतने दिनों तक कुछ नहीं कहा ? क्या इसी नीयत से चुप थे ? (**अनुनयपूर्वक**) पंडीजी, मैंने आपको सवा सेर गेहूँ के बदले पचीसों सवा सेर गेहूँ दे दिये, अब सवा सेर गेहूँ का साढ़े पाँच मन गेहूँ ?

विप्र : लेखा जौ-जौ बखशीश सौ-सौ । तुमने जो भी दिया उसका कोई हिसाब नहीं । तुम्हारे नाम बही में साढ़े पाँच मन गेहूँ लिखा हुआ है, जिससे जी चाहो दिखवा लो । दे दो तो नाम छेक दूँ, नहीं तो और बढ़ता जायेगा ।

शंकर : गरीब को क्यों सताते हो ? मुझे तो खाने का ठिकाना नहीं है, साढ़े

पाँच मन गेहूँ कहाँ से लाऊँगा ?

विप्र : (**तेज स्वर में**) जहाँ से लाओ। मैं छटाँक-भर भी नहीं छोड़ूँगा। यहाँ नहीं दोगे तो भगवान के घर दोगे।

शंकर : पंडीजी, यहीं दूँगा। भगवान के घर नहीं। इस जन्म में तो ठोकर खा ही रहा हूँ, उस जन्म के लिए क्यों काँटे बोऊँ ? लेकिन पंडीजी, यह इंसाफ नहीं है। आपने इतने दिनों तक कुछ नहीं कहा, राई का पहाड़ बना दिया। वामन होकर आपको ऐसा नहीं करना चाहिए था। पहले ही तकादा कर लिया होता तो आज इतना बड़ा बोझ तो नहीं रहता। मर-खपकर मैं आपको साढ़े पाँच मन गेहूँ दे दूँगा, लेकिन आपको भी ऊपर जवाब देना होगा।

विप्र : (**हँसता है**) हा हा हाऽऽऽ ! भगवान के यहाँ, वहाँ की चिंता तुम नहीं करो। वहाँ तो सब अपने हैं। ऋषि-मुनि, देवता सभी। वे लोग मेरे खिलाफ़ कैसे होंगे ? क्या यहाँ कोई अपने जात के खिलाफ़ है ? (**विराम**) कब दे रहे हो, बोलो कब ?

शंकर : मेरे पास अभी सेर-दो सेर भी गेहूँ नहीं है, फिर साढ़े पाँच मन गेहूँ कहाँ से लाऊँगा ? कहीं से मागूँगा-चागूँगा, तभी न।

विप्र : (**आक्रोश से**) मैं नहीं मानूंगा। सात साल हो गये, अब एक दिन भी नहीं छोड़ूँगा। (**स्वर मुलायम कर**) गेहूँ नहीं दे सकते हो तो रुक्का लिख दो।

शंकर : मुझे तो देना है, चाहे गेहूँ लो चाहे रुक्का लिखवाओ। लेकिन दाम किस हिसाब से रखोगे ?

विप्र : बाज़ार का भाव साढ़े सात रुपये पसेरी है, तुम्हें सात रुपये के हिसाब से लिख दूँगा।

शंकर : जब दे ही रहा हूँ तो छूट कैसी ? पसेरी में आठ आना छुड़ाकर पाप क्यों मोल लूँ ?

विप्र : (**हिसाब लगाकर**) गेहूँ का दाम कुल तीन सौ रुपया हुआ। तीन सौ रुपये का रुक्का लिख दूँगा। पाँच रुपये सैकड़े सूद लगेगा। साल-भर में नहीं देने पर यह सूद मूल हो जायेगा। स्टाम्प और रुक्के की तहरीर तुम्हें अलग से देनी पड़ेगी। समझे !

विप्र और शंकर चले जाते हैं। भीड़ से पाँच-छह लोग विप्र की निन्दा करते हैं। शंकर और किसुन का प्रवेश।

किसुन : (**निरीह भाव से**) माँ बोलती है, अब दोपहर का खाना नहीं बनेगा। एक बार रात को रोटी बनेगी।

शंकर : (**गमछे से कुछ चबेना निकालकर किसुन को देता है**) खाओ !

किसुन : रोटी खाऊँगा।

शंकर : जा, माँ से कहना, अगर आटा हो तो दो रोटियाँ अभी बना दें।

किसुन जाता है। शंकर वहीं बैठा है। जेब से अधजली बीड़ी निकालता है। सुलगाता है। नेपथ्य से किसुन की आवाज़।

किसुन : (**कारुणिक स्वर में**) माँ, मुझे भूख लगी है। रोटी दो, माँ...चूल्हा जलाओ न, माँ...भूख से पेट दर्द कर रहा है। (**सुबकता है**) रोटी... रोटी...(**आवाज़ क्रमशः तेज। तभी पीटने की आवाज़**) नहीं... नहीं...अब नहीं माँगूँगा। मुझे भूख नहीं है...नहीं...नहीं ई...ई...!

आवाज़ के साथ शंकर के चेहरे पर दुख, क्रोध और निराशा के भाव क्रमशः आते-जाते हैं। यकायक वह चीखता है।

शंकर : नहीं...ई...ईऽऽऽ ई...!

बीड़ी को ज़मीन पर फेंककर मसल देता है। चिलम निकालकर फोड़ देता है।

: (**दृढ़ स्वर में**) अब नहीं पीऊँगा, कभी नहीं। न बीड़ी, न तंबाकू। पहले महाजन के रुपये चुकाऊँगा। तीन सौ तीस रुपये और ऊपर से सूद। चाहे जैसे हो, चुकाना तो है ही।

कुदाल लेकर जल्दी-जल्दी खेत तामने लगता है। और तामते-तामते चला जाता है।

पुरुष का प्रवेश।

पुरुष : (**लय में**)
शंकर हर दिन खटा रे भइया
शंकर हर दिन खटा।
भूखा-प्यासा रहकर उसने
रुपये जमा किये रे भइया
रुपये जमा किये।

पुरुष का प्रस्थान। और विप्र का प्रवेश।

विप्र : (**आवाज़ देता है**) शंकरवा...रे शंकरवा ! मर तो नहीं गये !

शंकर : नहीं पंडीजी, मैं तो आपके यहाँ ही जा रहा था। (**कमर से रुपये निकालकर**) ये लीजिये तीन सौ तीस रुपये।

विप्र : (**गिनकर**) पर यह तो तीन सौ तीस रुपये हैं। कहाँ से लाये ये रुपये, कहाँ से ?

शंकर : पंडीजी, कुछ बरतन बेचे, कुछ कमाकर जमा किये। आपकी आशीष से इतना हो पाया।

विप्र : पर यह तो तीन सौ तीस रुपये ही हैं। इसका सूद ?

शंकर : पंडीजी, अभी मूल ले लीजिये। सूद के रुपये दो-तीन महीने में दे दूँगा। अब मुझे उऋण कर दीजिये, पंडीजी ! (**हाथ जोड़ता है।**)

विप्र : उऋण तो तभी होगे, जब कौड़ी-कौड़ी चुका दोगे। जाओ, सूद के सत्तर रुपये लेकर जाओ।

शंकर : पंडीजी, दया करो, रात में खाने के लिए घर में कुछ नहीं है। दो-चार महीने में दे दूँगा।

विप्र : नहीं। मैं ऐसा रोग नहीं पालता। अगर बाकी रुपये नहीं मिले तो छह रुपये सैकड़े का ब्याज लगेगा। ये तुम्हारे रुपये हैं, चाहो तो ले लो चाहो तो मेरे यहाँ छोड़ दो।

शंकर : नहीं, पंडीजी ! ये रुपये आप रख लीजिये। जाता हूँ, कहीं से और रुपये का बंदोबस्त करने।

शंकर का जाना। दर्शकों से रुपये माँगता हुआ।

विप्र : (**कुटिलता से**) मेरे शिकार को छेड़ने की इस गाँव में किसको हिम्मत है ? (**दर्शकों की तरफ़ हाथ उठाकर**)

विप्र हँसता हुआ प्रस्थान करता है। शंकर का प्रवेश। पहले से अधिक टूटा और थका-थका सा।

शंकर : इतना दुख-दर्द सहने पर भी और रुपया जमा नहीं हो सका। गाँव में किसी ने कर्ज नहीं दिये। कहाँ से अब रुपये लायें ? (**जेब से बीड़ी निकालकर पीता है। तीन-चार कशें लगातार**) नहीं, पेट काट-काट-कर अब सूद के रुपये जमा नहीं करना है। अब तो खाओ और पीओ। साल हो गया है भर-पेट खाना खाये हुए।

किसुन का प्रवेश।

किसुन : बाबूजी, माँ पूछ रही है, मजूरी करने नहीं जाओगे ?

शंकर : (**फटी-फटी आँखों से**) क्या फायदा ? मिहनत से क्या फायदा ? मजदूरी हम करें मजा दूसरे लूटें। सब बेकार है। (**जेब से पैसे निकाल-कर देता है**) ले जा, जो मन में आये बाजार से खरीदकर खाओ। अब तुम्हारे नये कपड़े भी बना जायेंगे। रुपया जमा करने से कर्ज उतरने वाला नहीं है।

शंकर का प्रस्थान और पुरुष का प्रवेश।

पुरुष : तीन बरस बाद रे भइया।
तीन बरस के बाद

तीन बरस के बाद रे भइया।
तीन बरस के बाद रे भइया
तीन बरस के बाद रे भइया।
एक दिन,
तीन बरस के बाद।

पुरुष गाते हुए चला जाता है। विप्र का प्रवेश।

विप्र : (**कड़ी आवाज़ में**) शंकरवा !

शंकर का अनमने ढंग से प्रवेश। विप्र शंकर को बही दिखाता है।

विप्र : तुम्हारे रुपये मिनहा करने के बाद तुम्हारे यहाँ एक सौ अठहत्तर रुपये निकलते हैं।

शंकर : (**लापरवाही से**) इतने रुपये तो उसी जनम में दूँगा। इस जनम में पंडीजी कहाँ से...?

विप्र : (**क्रोध से**) मैं इसी जन्म में लूँगा। यहीं।

शंकर : एक बैल है वह ले लीजिये, एक झोंपड़ी है वह ले लीजिये। मेरे पास इन दोनों के सिवा और कुछ नहीं है।

विप्र : (**डाँटकर**) मुझे बधिया-बैल लेकर क्या करना है ? मुझे देने के लिए तुम्हारे पास बहुत-कुछ है।

शंकर : मेरे पास देने के लिए क्या है ?

विप्र : तुम तो हो। (**मुलायम होकर**) आखिर तुम भी तो कहीं-न-कहीं मज़दूरी करते हो। हम भी खेती-बाड़ी के लिए मजदूर रखते ही हैं। सूद में हमारे यहाँ काम किया करो। (**दया प्रदर्शित कर**) जब सुभीता हो मूल दे देना। (**कड़ी आवाज़ में**) अब तुम दूसरे के यहाँ काम नहीं कर सकते। जब तक तुम मेरे रुपये चुका नहीं देते तब तक तुम दूसरे के खेत में नहीं जा सकते। ये झोंपड़ी और बैल लेकर मैं क्या करूँगा ? मेरे पास खुद चार जोड़े बैल हैं। रहने के लिए पक्का मकान है। तुम्हारा ज़िम्मा कौन लेगा इस गाँव में ? (**दर्शकों की ओर अँगुली उठाता है।**)

शंकर : (**टूटती आवाज़ में**) महाराज, सूद में तो काम करूँगा। खाऊँगा कहाँ से ?

विप्र : क्या घरवाली मर गयी, लड़के लूल्ले हो गये ? वे दोनों कमायेंगे। तुम्हें मैं आधा सेर पनपियाई दे दिया करूँगा। ओढ़ने के लिए साल में एक कम्बल भी दे दिया करूँगा। एक मिरजई भी बनवा दूँगा। अब और क्या चाहिए ? मुझे कोई ग़रज़ नहीं है, मैं तो तुम्हारे फ़ायदे के लिए

ही कह रहा हूँ कि कहीं मेरा कर्ज़ उस ज़माने में भी नहीं सधाना पड़े !

शंकर : (**कुछ पल तक गहरी चिंता और सोचने की मुद्रा में**) पंडीजी, यह तो जनम-भर की गुलामी हुई।

विप्र : गुलामी ? तुम्हारे फ़ायदे के लिए, तुम्हें पाप से बचाने के लिए, तुम्हें इस जन्म में सुखी रखने के लिए ऐसा कह रहा हूँ। क्या मैं अपने रुपये छोड़ दूँ ? तुम भागोगे तो तुम्हारा लड़का भरेगा। हाँ, जब सब लोग मर-खप जाओगे तो दूसरी बात है।

शंकर : गरीब भागकर कहाँ जायेगा ? गाँव या शहर में कौन हमारा अपना है, हमारी बात सुनने वाला ?

विप्र : चल, आज से मेरे यहाँ काम शुरू कर दे। चल !

विप्र के पीछे-पीछे शंकर चलता है। दो-चार बार चक्कर लगाने के बाद।

विप्र : खेत ताम।

शंकर कुदाल से खेत तामने का अभिनय करता है।

: खेत जोत।

शंकर खेत जोतने का अभिनय करता है।

: बीज बो।

बीज बोने का अभिनय करता है।

: फ़सल काट।

फ़सल काटने का मूकाभिनय।

: बोझा बाँध !

बाँधने का अभिनय।

: चल, खलिहान में रख आ।

शंकर बोझा सर पर उठाकर चलने का अभिनय करता है। विप्र चला जाता है। बोझ खलिहान में पटककर लौटता है।

शंकर : (**सुस्ताता हुआ**) सवा सेर गेहूँ के खातिर जनम-भर के लिए गुलाम हो गये। यह सब मेरे पहले जनम का पाप है।

सामने से किसुन का सर झुकाये प्रवेश।

शंकर : किसुन, कहाँ जा रहा है ?...घर ? अकेले ? माँ कहाँ है ?

किसुन : पंडीजी के घर में...।

शंकर चौंकता है। विप्र का प्रवेश। चेहरे पर कामुक भाव। कुटिल मुसकान। निचले होंठ पर अँगुली फेरता हुआ।

विप्र : शंकरवा की जनाना भी क्या चीज है ! सच, मज़ा आ गया !

किसुन : (**शंकर से**) बाबूजी, भूख लगी है। खाने के लिए पैसा दो न।

विप्र : बाप के पास खज़ाना गड़ा है क्या ? सूद देने के लिए पैसा नहीं है और तुम्हें खाना देने के लिए पैसा ! (**किसुन को झटक देता है। शंकर से**) खबरदार जो काम के बखत देह चोरी की, मारकर देह खराब कर दूँगा। गेंहूँ लेते समय गिड़गिड़ा रहे थे और काम करने में नानी मरती है ! बिना पूरा काम किये छुट्टी नहीं। समझे !

डाँटकर विप्र चला जाता है। शंकर विवश भाव से किसुन को जाते हुए देखता है। दोनों के जाने के बाद कुदाल लेकर ज़मीन तोड़ने लगता है। थक जाता है। ज़ोरों को खाँसी उभरती है। बैठकर एक हाथ सीने और एक हाथ सर पर रखकर खाँसता है। खाँसी रुकने पर सर उठाता है। फिर ज़ोर से खाँसने लगता है। एक हिचकी आती है और वह गिर जाता है। शंकर की मृत्यु। मंगल का प्रवेश।

मंगल : (**नज़दीक जाकर**) भइया, भइया !

आवाज़ सुनकर किसुन आता है और शंकर की देह पर सर रखकर सुबकने लगता है। विप्र का प्रवेश।

विप्र : क्या हुआ ? यह तुम लोगों ने क्या रोना-धोना लगा रखा है ! (**चौंककर**) अरे, शंकर मर गया।...यह सब पाप का फल है, भगवान भी आखिर देखते हैं न। (**किसुन का हाथ पकड़कर उठाता है**) चलो, उठाओ कुदाल ! बाप का उधार अब तुम चुकाओगे। समझे ? अब तुम हमारे खेत में काम करोगे।

किसुन : (**झिटकता है**) छोड़ो, मुझे छोड़ दो।

विप्र और ज़ोर से पकड़ लेता है।

मंगल : (**ज़ोर से**) बंद करो यह मनमानी। बरदास्त की भी एक हद होती है, अब हम यह अन्याय बरदास्त नहीं करेंगे।

विप्र : (**व्यंग्यपूर्वक हँसता है**) भुलावे में मत रहो। अब तुम्हारे भतीजे पर मेरा हक़ है। जब तक वह सवा सेर गेहूँ नहीं चुकाता, उसे हमारा सारा काम करना होगा।

किसुन : नहीं करूँगा।

विप्र : (**आँखें तरेरकर**) नहीं करोगे ?

किसुन : नहीं...!

विप्र : (**दर्शकों को संबोधित करता हुआ**) सुन रहे हैं भाइयो, आप सब लोग शरीफ़ हैं, भद्र पुरुष हैं, पढ़े-लिखे हुए लोग हैं, इसे समझाइये। (**हँसकर**) यह मूर्ख, क़ानून की बात नहीं मानता।

किसुन : (**दर्शकों के बीच जाकर**) हाँ-हाँ पूछिये...पूछिये...इन भाइयों से। मैं भी पूछता हूँ (**दर्शकों से**) बोलिये बाबू, बोलिये। ये कानून है या जुल्म ? हम इसे कब तक सहेंगे ? कब तक ?

दर्शकगण : (**ज़ोर से**) नहीं, यह अन्याय है। यह जुल्म है। अब इसे नहीं सहा जा सकता। न गाँव में, न शहर में।

विप्र किसुन का हाथ पकड़कर खींचता है। मंगल दौड़कर आता है। मंगल और विप्र में थोड़ी हाथा-पाई। मंगल और किसुन चेहरे पर क्रूरता के भाव लिये विप्र की ओर धीरे-धीरे बढ़ते हैं। विप्र डरते हुए अपने को छुड़ाकर भागने लगता है। मंगल और किसुन पीछा करते हैं। दौड़ते हुए विप्र, मंगल और किसुन भीड़ में खो जाते हैं।

गिरगिट

अंतोन चेख़व

नाट्य-रूपांतर
रमेश उपाध्याय

'गिरगिट' का प्रथम नुक्कड़-मंचन 'निशांत', दिल्ली द्वारा अक्टूबर, 1977 में तिमारपुर (दिल्ली) में किया गया।

इस प्रस्तुति में काम करने वाले कलाकारों का परिचय :

सूत्रधार	:	सविता शर्मा
बड़ा अफ़सर	:	परमिंदर कुमार
मोटा अफ़सर	:	जगदीश कुमार शर्मा
छोटा अफ़सर	:	विष्णु बहादुर गुरुंग
जेबकतरा	:	रामनिवास
कुत्ता	:	अनुराग
बाज़ार की भीड़	:	शम्शुल इस्लाम, नीलिमा शर्मा, अनिल त्यागी, ज़िलेसिंह, अनिल ध्यानी

सूत्रधार दर्शकों को आकृष्ट करने के लिए ढपली बजाता है। नाटक-मंडली का सामूहिक नृत्य-गान।

समूह गान : गिटपिट गिटपिट, गिरगिट गिरगिट
गिरगिट गिरगिट, गिटपिट गिटपिट
चटपट रंग बदल लो भाई
चटपट ढंग बदल लो भाई
गिटपिट गिटपिट, गिरगिट गिरगिट
गिरगिट गिरगिट, गिटपिट गिटपिट
एक रंग से काम न चलता
एक ढंग से काम न चलता
चटपट रंग बदल लो भाई
चटपट ढंग बदल लो—
गिटपिट गिटपिट, गिरगिट गिरगिट
गिरगिट गिरगिट, गिटपिट गिटपिट
अफ़सर के आगे झुक जाओ
चपरासी पर रौब जमाओ
मालिक के तलवे सहलाओ
मज़दूरों को डाँट पिलाओ
चटपट रंग बदल लो भाई
चटपट ढंग बदल लो—
गिटपिट गिटपिट, गिरगिट गिरगिट
गिरगिट गिरगिट, गिटपिट गिटपिट
हरदम कुरसी के गुण गाओ
सड़क छाप को लात लगाओ
काम निकलता हो अपना तो
गदहे को भी बाप बनाओ
चटपट रंग बदल लो भाई
चटपट ढंग बदल लो—

गिटपिट गिटपिट, गिरगिट गिरगिट
गिरगिट गिरगिट, गिटपिट गिटपिट

सूत्रधार : (**सबको रोकते हुए**) बहुत है, बहुत है। आज के लिए इतने ही दर्शक काफ़ी हैं। (**दर्शकों से**) हाँ तो दर्शक भाइयो, नाटक अब शुरू होता है। इस नाटक का नाम है—गिरगिट। गिरगिट एक कहानी है जो सन् 1884 में रूसी लेखक अंतोन चेखव ने लिखी थी। यह नाटक उसी कहानी का रूपांतर है और इसके रूपांतरकार हैं रमेश उपाध्याय। सन् 1884 में रूसी लोग...।

नाटक-मंडली फिर नृत्य-गान शुरू कर देती है।

समूह गान : रूसी चीनी या अमरीकी
फ्रांसीसी हो या अफ़रीकी
जिससे काम निकलता हो
तुम झट उसके हो जाओ
फ़ौरन रंग बदल लो भाई
फ़ौरन ढंग बदल लो—
गिटपिट गिटपिट, गिरगिट गिरगिट
गिरगिट गिरगिट, गिटपिट गिटपिट
पूँजीवादी रहो सदा तुम
पूँजी का हित करो सदा तुम
शोषण और दमन करवाओ
फिर झटपट जनता बन जाओ
फ़ौरन रंग बदल लो भाई
फ़ौरन ढंग बदल लो—
गिटपिट गिटपिट, गिरगिट गिरगिट
गिरगिट गिरगिट, गिटपिट गिटपिट

सूत्रधार : (**चिल्लाकर**) बस! बस करो! (**दर्शकों से**) इन एक्टरों को संभालना बड़ा मुश्किल है। (**मंडली से**) रुको भाई, रुको, नाटक शुरू करो।

मंडली नृत्य-गान बंद करती है। सूत्रधार एक कुरसी लाकर बीच में रख देता है। तीन अभिनेता आते हैं। बीच वाला कुरसी के आगे आकर खड़ा होता है, बाक़ी दोनों इधर-उधर खड़े हो जाते हैं।

बीच वाला : मैं बड़ा अफ़सर हूँ। (**कहकर कुरसी पर बैठ जाता है**)

बायें वाला : मैं मोटा अफ़सर हूँ। (**कहकर सावधान की मुद्रा में सलाम ठोंकता है।**)

दायें वाला : मैं छोटा अफ़सर हूँ। (**वह भी सावधान की मुद्रा में सलाम ठोंकता है।**)

बड़ा अफ़सर : (**बगल में पहले से दबी हुई एक फ़ाइल निकालकर देखते हुए**) शहर में अमन-चैन है?

मोटा अफ़सर : (**छोटे अफ़सर से**) शहर में अमन-चैन है?

छोटा अफ़सर : (**दर्शकों से**) शहर में अमन-चैन है? (**मोटे अफ़सर से**) पूरा अमन-चैन है, सरकार!

मोटा अफ़सर : (**बड़े अफ़सर से**) पूरा अमन-चैन है, सरकार!

बड़ा अफ़सर : कोई आंदोलन, कोई जुलूस, कोई हड़ताल, कोई हंगामा तो नहीं?

मोटा अफ़सर : (**छोटे अफ़सर से**) कोई आंदोलन, कोई जुलूस, कोई हड़ताल, कोई हंगामा तो नहीं?

छोटा अफ़सर : (**दर्शकों से**) कोई आंदोलन, कोई जुलूस, कोई हड़ताल, कोई हंगामा तो नहीं? (**मोटे अफ़सर से**) सब ठीक है, सरकार!

मोटा अफ़सर : (**बड़े अफ़सर से**) सब ठीक है, सरकार!

बड़ा अफ़सर : कोई जनवादी, समाजवादी, साम्यवादी बाहर तो नहीं?

मोटा अफ़सर : (**छोटे अफ़सर से**) कोई जनवादी, समाजवादी, साम्यवादी बाहर तो नहीं?

छोटा अफ़सर : (**दर्शकों से**) कोई जनवादी, समाजवादी, साम्यवादी बाहर तो नहीं? (**मोटे अफ़सर से**) सब अंदर हैं, सरकार!

मोटा अफ़सर : (**बड़े अफ़सर से**) सब अंदर हैं, सरकार!

बड़ा अफ़सर : सेठ-साहूकार, सूदखोर, जमाखोर, मुनाफ़ाखोर, रिश्वतख़ोर वग़ैरह सब खुश हैं?

मोटा अफ़सर : (**छोटे अफ़सर से**) सेठ-साहूकार, सूदखोर, जमाखोर, मुनाफ़ाखोर, रिश्वतख़ोर वग़ैरह सब खुश हैं?

छोटा अफ़सर : (**दर्शकों से**) सेठ-साहूकार, सूदखोर, जमाखोर, मुनाफ़ाखोर, रिश्वतखोर वग़ैरह सब खुश हैं? (**मोटे अफ़सर से**) सब खुश हैं, सरकार!

मोटा अफ़सर : (**बड़े अफ़सर से**) सब खुश हैं, सरकार!

बड़ा अफ़सर : (**खड़ा होकर**) बको मत! सब खुश नहीं है। उनको और खुश करना है।

मोटा अफ़सर : (**छोटे अफ़सर से**) बको मत! सब खुश नहीं हैं। उनको और

खुश करना है।

छोटा अफ़सर : (**दर्शकों से**) बको मत ! सब खुश नहीं हैं। उनको और खुश करना है। (**मोटे अफ़सर से**) हम पूरी कोशिश कर रहे हैं, सरकार !

मोटा अफ़सर : हम पूरी कोशिश कर रहे हैं, सरकार !

बड़ा अफ़सर : जाओ, दफ़ा हो जाओ !

मोटा अफ़सर : (**सलाम ठोंककर**) थैंक यू, सर !

छोटा अफ़सर : (**सलाम ठोंककर**) थैंक यू वेरी मच, सर !

छोटे-मोटे अफ़सर मशीनी ढंग से मुड़कर चल देते हैं। बड़ा अफ़सर सामने से हटकर मंडली में जा मिलता है। सूत्रधार कुरसी उठा ले जाता है। मोटे-छोटे अफ़सर लैफ़्ट-राइट करते हुए चक्कर लगाते हैं। छोटा अफ़सर जेब से एक केला निकालकर खाने लगता है। आगे चलता हुआ मोटा अफ़सर अचानक 'हाल्ट' कर देता है। छोटा अफ़सर रुक जाता है और घबराकर पूरा केला मुँह में भर लेता है।

मोटा अफ़सर : (**कड़ककर**) रामसिंह ! (**भरे मुँह से बोलने में असमर्थ छोटे अफ़सर से कोई उत्तर न पाकर ज़ोर से**) रामसिंह !

छोटा अफ़सर : (**केला निगलकर**) यस सर !

मोटा अफ़सर : (**घूमकर**) तू अपनी लिमिट से बाहर जाने लगा है, रामे ! हमने कहा थैंक यू सर, और तू कहता है थैंक यू वेरी मच सर। तू क्या वेरी मच है ?

छोटा अफ़सर : ग़लती हो गयी, सर !

मोटा अफ़सर : झूठ बोलता है।

छोटा अफ़सर : मेरी कोई ग़लती नहीं, सरकार !

मोटा अफ़सर : फिर झूठ।

छोटा अफ़सर : मैं अपनी ग़लती मानता हूँ, सर !

मोटा अफ़सर : ग़लती मानने से क्या होता है ? कुछ खिलाने-पिलाने की बात हो तो बात कर।

छोटा अफ़सर : ज़रूर-ज़रूर, सर ! आज ही। कहिये तो अभी।

मोटा अफ़सर : नहीं, अभी नहीं। अभी तो बड़े साहब के लिए बाज़ार से कुछ फल-फ़ूट उठाने हैं। (**जेब से सिगरेट निकालकर**) ला, ज़रा माचिस निकाल।

छोटा अफ़सर जेब से बीड़ी-माचिस निकालता है। बीड़ी मुँह में लगाकर माचिस जलाता है और अपनी बीड़ी सुलगाने को होता है कि मोटा अफ़सर हुंकारता है। छोटा इशारा समझकर पहले उसकी सिगरेट जलाता है, फिर अपनी बीड़ी। मोटा अफ़सर आगे-आगे अपना डंडा हिलाता हुआ और छोटा अफ़सर उसके पीछे लेफ़्ट-राइट करता हुआ चलने लगता है। सूत्रधार आगे आता है।

सूत्रधार : (**मंडली से**) बाज़ार का सीन। (**मंडली बाज़ार का दृश्य उपस्थित करती है। सूत्रधार दर्शकों से**) यह बाज़ार है। और इस बाज़ार में शांति और व्यवस्था बनाये रखने के लिए हमारे ये छोटे-मोटे अफ़सर इधर घूमते रहते हैं।

दोनों अफ़सर बाज़ार का एक चक्कर लगाते हैं। इसी बीच दूसरे सिरे से एक छोटा लड़का कूँ-कूँ करता हुआ कुत्ते की तरह दौड़ता आता है। उसके पीछे-पीछे गले में रूमाल बाँधे हुए एक जेबकतरा "पकड़ो-पकड़ो, जाने न पाये" कहता हुआ आता है।

सूत्रधार : बाज़ार में भी कुत्ते होते हैं और जेबकतरे भी। कुत्ते लोगों को काटते हैं और जेबकतरे लोगों की जेबों को।

शोर सुनकर दोनों अफ़सर चौंककर खड़े हो जाते हैं।

मोटा अफ़सर : यह कैसा हंगामा है, रामे ?

छोटा अफ़सर : कोई आवारा कुत्ता मालूम पड़ता है।

मोटा अफ़सर : तू जानता नहीं इसको ?

छोटा अफ़सर : कोई नया आया लगता है, साब ! वरना यहाँ के सारे कुत्तों को मैं जानता हूँ।

मोटा अफ़सर : पकड़ ले साले को !

छोटा अफ़सर दौड़कर छोटे लड़के को पकड़ लेता है। 'बाज़ार' के लोग 'भीड़' बनकर "क्या है ? क्या बात है ?" कहते हुए छोटे अफ़सर और लड़के को घेर लेते हैं। मोटा अफ़सर अलग खड़ा आराम से सिगरेट पीता है।

सूत्रधार : चेखव की कहानी में लड़के की जगह कुत्ता आता है, पर नाटक में कुत्ता हम कहाँ से ले आयें ? सो, हम इस छोकरे से कुत्ते

का काम लेते हैं। कुत्ता छोकरे से महँगा पड़ता है। खैर, आपको इससे क्या ? कुत्ते की जगह हम हाथी भी ले आते, और कहते कि कुत्ता है, तो भी आपको मानना पड़ता कि हाथी कुत्ता ही है।

जेबकतरा : (**भीड़ के अंदर से**) ले भाग। और भाग। पर जायेगा कहाँ ? पकड़ा गया न ? अब तो काटने के ख़िलाफ़ भी क़ानून बन गया है।

मोटा अफ़सर : (**डंडा हिलाते हुए आगे बढ़कर**) ये क्या हंगामा मचा रखा है यहाँ ? (**भीड़ पीछे हट जाती है। जेबकतरा अपनी उँगली ऊपर उठाये नज़र आता है**) कौन चिल्ला रहा था ? तुम ये उँगली क्यों ऊपर उठाये हुए हो ? और तुम लोगों ने यहाँ भीड़ क्यों लगा रखी है ? ऐं ?

जेबकतरा : (**अपनी उँगली मोटे अफ़सर को दिखाकर उसे फूँकता है, हाथ ज़ोर-ज़ोर से हिलाता है, जैसे बहुत दर्द हो रहा हो**) देखिये हुज़ूर, मैं चुपचाप अपने काम से जा रहा था। एक दूकान पर ज़रा भीड़ लगी थी। मैंने सोचा, शायद कोई सेल-वेल लगी है। हो सकता है, मेरे हाथ भी कोई माल लग जाये। इसलिए मैं वहाँ खड़ा हो गया था। और सरकार, मालूम नहीं क्यों, इस बदमाश ने एकाएक मेरे हाथ में काट लिया।

मोटा अफ़सर छोटे अफ़सर की ओर देखता है। छोटा अफ़सर लड़के को पकड़े हुए मोटे अफ़सर के पास आता है और उसके कान में कुछ कहता है।

सूत्रधार : (**दर्शकों से**) छोटा अफ़सर कह रहा है—यह आदमी जेब-कतरा है। (**मोटा अफ़सर कुछ पूछता है, छोटा अफ़सर कान में बताता है**) छोटा अफ़सर कह रहा है—मैं इसे जानता हूँ। समय से महीना पहुँचाता है।

मोटा अफ़सर छोटे अफ़सर की बात सुनकर सिर हिलाता है, अपना कोट उतारकर छोटे अफ़सर को देता है और जेबकतरे से मुख़ातिब होता है।

मोटा अफ़सर : हूं ! तो ये तुम हो !

जेबकतरा : गुस्ताख़ी माफ़ हो, सरकार ! मैं ठहरा काम-काजी आदमी। और फिर मेरा काम कितना पेचीदा है ! उँगलियाँ ठीक न हों तो हुज़ूर कोई क्या काम कर सकता है ? और इस बदमाश

ने ऐसा काटा है कि हफ़्ते-भर मेरी उँगली काम नहीं करेगी। इसीलिए मेरी गुज़ारिश है कि सरकार, मुझे इस कुत्ते के मालिक से मेरा हरजाना दिला दें। और हुज़ूर, क़ानून में भी कहीं नहीं लिखा है कि हम जानवरों को चुपचाप बरदाश्त करते रहें। अगर सब ऐसे ही काटने लगें तब तो जीना ही मुश्किल हो जायेगा। आप मेरा हरजाना दिला दें, हुज़ूर !

मोटा अफ़सर : हूं। लेकिन यह कुत्ता है किसका ?

जेबकतरा : मैं क्या जानूँ, सरकार ? जिसका हो, उससे पूछ लीजिये।

मोटा अफ़सर : (**भीड़ से**) किसका कुत्ता है ये ? किसी को मालूम है, ये कुत्ता किसका है ? (**दर्शकों से**) देखो ! सब सालों को साँप सूँघ गया है। लेकिन मैं भी एक नंबर का हरामी हूँ। छोड़ूँगा नहीं। ये कुत्ता आवारा तो लगता नहीं, और पालतू है तो इसका कोई मालिक ज़रूर होगा। मैं उसे बताऊँगा कि कुत्तों को छुट्टा छोड़ देने का क्या मतलब है। जो लोग क़ानून के मुताबिक़ नहीं चलते, उनके साथ अब मुझे सख़्ती से पेश आना ही पड़ेगा। ऐसा जुरमाना ठोकूँगा कि याद करेंगे। (**छोटे अफ़सर से**) रामसिंह, पता लगाओ, ये कुत्ता किसका है ? और पता नहीं लगता तो कमिटी वालों को बुलाओ और इसे यहीं गोली से उड़वा दो। (**भीड़ से**) मैं कहता हूँ, अब भी तुम लोग बता दो कि ये कुत्ता किसका है ? नहीं बताया और बाद में मुझे पता लग गया—और पता तो मैं लगा ही लूँगा—तब देखना कैसे चमड़ी उधेड़ता हूँ !

एक अभिनेता : अजीब बात है साहब, आप कुत्ते के मालिक का पता लगाने की बात कर रहे हैं, पहले यह तो मालूम कर लीजिये कि इसको कुत्ते ने काटा क्यों ?

दूसरा अभिनेता : और क्या ! कोई किसी को बेवजह तो काटता नहीं।

मोटा अफ़सर : हूं ! तो यहाँ कुत्ते के हिमायती मौजूद हैं !

एक अभिनेता : हिमायत की बात नहीं साहब, लेकिन मालूम तो होना चाहिए कि कुत्ते ने इसे क्यों काटा ? आप तो पूरी बात का पता लगाये बिना ही कुत्ते को गोली से उड़वा देने और इसके मालिक की चमड़ी उधेड़ देने की बातें करने लगे।

मोटा अफ़सर : ए मिस्टर, तू हमको क़ानून सिखाता है ? ये तेरा कुत्ता है ?

अभिनेता : मेरा ? मैं आपको कुत्ते पालने वाला दिखायी देता हूँ ? मेरे तो अपने ही पिल्ले पल जायें तो बहुत है।

मोटा अफ़सर : तो फिर ये बकबक क्या लगा रखी है ? चुपचाप खड़ा क्यों नहीं रहता ? जानता नहीं, हमारे काम में दखल देना कानूनन जुर्म है ?

अभिनेता : पर साहब, आप सोचिये तो सही, ये कुत्ता क्या आपको पागल नज़र आता है ? सीधा-सादा कुत्ता है ।

दूसरा अभिनेता : और मैंने अपनी आँखों से देखा है कि यह शरीफ़ज़ादा अपनी जलती हुई सिगरेट कुत्ते के मुँह पर लगा रहा था । बताइये, कोई तुक है ? और कुत्ता आखिर कुत्ता है । कोई आदमी तो है नहीं कि सब-कुछ बरदाश्त कर जाये । उसे यह मज़ाक पसंद नहीं आया और उसने काट लिया ।

मोटा अफ़सर : अगर तुमने अपनी आँखों से सब-कुछ देता है तो...।

जेबकतरा : सरकार, इसने कुछ नहीं देखा । यह झूठ बोलता है । (**उस अभिनेता से**) क्यों बे काने, झूठ क्यों बोलता है ? जब इसने मुझे काटा, तेरी तो वहाँ परछाईं भी नहीं थी । और सरकार क्या साले बेवकूफ़ हैं ? सरकार खुद जानते हैं कि कौन झूठ है और कौन सच्चा । अगर मैं झूठ कह रहा हूँ तो चल अदालत में । करा ले फ़ैसला । क़ानून में लिखा है—अब हम सब बराबर हैं ।

अभिनेता : देख, मैं कहे देता हूँ, ज़्यादा क़ानून मत छाँट, नहीं तो मैं अभी बता दूँगा कि तू एक नंबर का बदमाश और जेबकतरा है ।

जेबकतरा : (**दौड़कर अभिनेता का गला पकड़ते हुए**) तेरी तो मैं... साले, समझ क्या रखा है । खुद मेरा भाई पुलिस में है... बताये देता हूँ...हाँ...!

मोटा अफ़सर दोनों को डंडा जमाकर अलग करता है ।

मोटा अफ़सर : बंद करो ये बकवास ! (**अभिनेता से**) अबे ओ श्रीमानजी, तू अगर इसके बारे में सब-कुछ जानता है तो इस कुत्ते के बारे में भी जानता होगा । बोल, किसका है ?

अभिनेता : आप कमाल करते हैं, साहब ! इस उचक्के से तो कुछ कहते नहीं, मुझ पर रौब गाँठते हैं । कुत्ता किसका है, मैं क्या जानूँ ? मैंने कोई कुत्तों की जानकारी रखने का दफ़्तर खोल रखा है ?

दूसरा अभिनेता : (**मोटे अफ़सर से**) सुनिये साहब, शायद यह कुत्ता सेठ रामपरशाद बेणीपरशाद का है ।

मोटा अफ़सर : (**चौंककर**) क्या कहा ? सेठ रामपरशाद बेणीपरशाद का

है यह कुत्ता ? (**छोटे अफ़सर से**) रामसिंह, हवा में कुछ ठंडक बढ़ गयी है । मेरा कोट देना । (**कोट पहनकर**) हूं ! अब ज़रा कुत्ते को ध्यान से देखो । (**दोनों अफ़सर लड़के को बीच में खड़ा करके उसके चारों ओर चक्कर लगाकर उसका मुआयना करते हैं**) हूँ ! (**जेबकतरे से**) लेकिन एक बात मेरी समझ में नहीं आती, इसने तुम्हें काटा कैसे ? यह तुम्हारी उँगली तक पहुँचा कैसे ? यह ठहरा ज़रा-सा जानवर, और तुम पूरे लहीम-सहीम आदमी !

छोटा अफ़सर : आप ठीक कहते हैं, सर ! इसने किसी कील-वील से उँगली छील ली होगी और सोचा होगा, कुत्ते के सिर मढ़कर हरजाना वसूल कर लो ।

मोटा अफ़सर : बिलकुल । बिलकुल यही बात है । मैं सब जानता हूँ । (**जेबकतरे को धमकाते हुए**) मैं तुम जैसे बदमाशों की नस-नस पहचानता हूँ ।

छोटा अफ़सर : लेकिन यह कुत्ता सेठजी का नहीं है, सर ! मैं सेठजी के घर अकसर जाता रहता हूँ । मुझे मालूम है, सेठजी कुत्ते पालने के शौक़ीन हैं, पर उनके पास ऐसा कोई कुत्ता नहीं है । उनके तो सारे कुत्ते शिकारी पोइंटर हैं, पोइंटर ।

मोटा अफ़सर : तुमको ठीक मालूम है ?

छोटा अफ़सर : जी सरकार !

मोटा अफ़सर : (**भाव-परिवर्तन के लिए कोट उतारते हुए**) उफ़ ये कंबख्त मौसम ! इसका कुछ पता नहीं चलता । कोट में गरमी लगती है । (**कोट छोटे अफ़सर को देते हुए**) अच्छा तो यह कुत्ता सेठजी का नहीं है ?

छोटा अफ़सर : जी सरकार !

मोटा अफ़सर : हाँ, यही तो मैं कहूँ कि यह कुत्ता उनका कैसे हो सकता है ? मैं क्या उनके कुत्तों को जानता नहीं ? उनके पास सब कुत्ते अच्छी नस्ल के हैं । एक-से-एक क़ीमती कुत्ता है उनके पास । और यह तो बिलकुल मामूली कुत्ता है । सेठजी भला ऐसा कुत्ता पालेंगे ! (**भीड़ से**) तुम लोगों का दिमाग़ तो खराब नहीं हो गया है ? सेठ रामपरशाद बेणीपरशाद ऐसा मरियल कुत्ता पालेंगे ? अरे, उनको तो ऐसा कुत्ता कहीं आस-पास दिख भी जाये तो गोली से उड़ा दें ।

जेबकतरा : (**खुश होकर**) तो सरकार, मेरा हरजाना ?

मोटा अफ़सर : हाँ, तुम्हारा हरजाना। लेकिन यह बताओ कि यह कुत्ता है किसका ? मैं अभी उस हरामज़ादे को पकड़कर बंद करवाता हूँ। मज़ाक बना रखा है लोगों ने। क़ानून की कोई इज़्ज़त ही नहीं। पागल कुत्तों को छुट्टा छोड़ देते हैं। कोई तरीक़ा है ! ऐसे तो लोगों की हिफ़ाज़त करना ही मुश्किल हो जायेगा ? (**भीड़ से**) कोई जानता है, यह कुत्ता किसका है ?

एक अभिनेता : यह कुत्ता सेठ रामपरशाद बेणीपरशाद का ही है, साहब !

मोटा अफ़सर : क्यों रामसिंह ? यह क्या सुन रहा हूँ मैं ?

छोटा अफ़सर : हो सकता है, उनका ही हो, सर ! इसके माथे पर तो लिखा नहीं है।

दूसरा अभिनेता : (**पहले अभिनेता की ओर इशारा करके**) ये साहब ठीक कह रहे हैं। यह कुत्ता सेठजी का ही है। कल मैंने उनके अहाते में बिलकुल यही कुत्ता देखा था।

मोटा अफ़सर : (**छोटे अफ़सर से**) रामसिंह, कोट मुझे दो और कुत्ते को ज़रा ठीक से देखो। ये कहते हैं, सेठजी का ही है। (**छोटा अफ़सर कुत्ते का निरीक्षण करता है, मोटा अफ़सर कोट फिर पहन लेता है**) रामसिंह, तुम ऐसा करो कि इसको सेठजी के यहाँ ले जाओ और वहाँ मालूम करो। अगर कुत्ता उनका हो तो मेरा नाम लेना और कहना कि सड़क पर दिखायी दे गया था और मैंने वापस भिजवाया है। (**छोटा अफ़सर जाने लगता है**) और हाँ, सेठजी से कहना, इसे सड़क पर न निकलने दिया करें। पता नहीं, कितना क़ीमती कुत्ता हो ! (**जेबकतरे की ओर मुड़कर**) और तू हाथ नीचा कर। पाजी कहीं का ! जानता है, सेठ रामपरशाद बेणीपरशाद क्या चीज़ हैं ? अगर उन्हें मालूम पड़ गया कि तू उनके कुत्ते के मुँह में सिगरेट घुसेड़ रहा था, तो तेरी खाल खिंचवाकर भूसा भरवा देंगे। समझा ? अब तू यहाँ से चलता-फिरता नज़र आ, नहीं तो मैं ही तेरी हड्डियाँ तोड़ता हूँ।

छोटा अफ़सर लड़के के साथ जाने को होता है कि रुक जाता है। दर्शकों के बीच से निकलकर एक अभिनेता आता दिखायी पड़ता है।

छोटा अफ़सर : सर, वो सेठजी का नौकर इधर आ रहा है, पहले उससे पूछ देखें ?

मोटा अफ़सर : हाँ-हाँ, पूछो-पूछो। (**खुद ही नौकर को पुकारते हुए**) अरे ओ

भाई, ज़रा सुनो तो ! (**नौकर के आने पर**) ज़रा देखना, यह कुत्ता सेठजी का है ?

नौकर : हमारे सेठजी का ? नहीं साहब, यह तो...।

जेबकतरा : (**बात काटकर**) देखा साब, मैं कोई झूठ बोल रहा था ?

मोटा अफ़सर : नहीं, तुम ठीक कह रहे थे। मैं ही ग़लती पर था। भला ऐसा मरियल और आवारा कुत्ता सेठ रामपरशाद बेणीपरशाद का हो सकता है। (**छोटे अफ़सर से**) देखो रामसिंह, अब इस कुत्ते के बारे में बात करना अपना वक़्त बरबाद करना है। यह आवारा कुत्ता है और कटखना भी है। क्या पता पागल ही हो ! तुम ऐसा करो कि टेलीफ़ोन करके कमेटी वालों को बुलाओ...।

नौकर : पर मेरी बात तो सुनिये, साहब ? मैंने कहा, यह कुत्ता हमारे सेठजी का नहीं है। लेकिन यह मैंने कब कहा है कि आवारा कुत्ता है ?

मोटा अफ़सर : तो ?

नौकर : यह हमारे सेठजी के भाई का कुत्ता है। परसों उनके साथ कलकत्ते से आया है।

मोटा अफ़सर : क्या कहा ? सेठजी के भाई आये हैं ? कलकत्ते वाले सेठ गंगा-परशाद ?

नौकर : जी हाँ, और यह कुत्ता कलकत्ते से उनके साथ आया है।

एक अभिनेता : तो क्या सेठों के साथ उनके कुत्ते भी कलकत्ते से भागने लगे हैं ?

मोटा अफ़सर : बको मत ! (**नौकर से**) तो गंगा सेठ भी कलकत्ते जाकर कुत्ते पालने लगे ?

नौकर : आजकल कौन सेठ कुत्ते नहीं पालता, साहब ? लेकिन अपनी-अपनी पसंद होती है। हमारे सेठजी को इस नस्ल के कुत्ते बिलकुल पसंद नहीं, पर गंगा सेठ को यही नस्ल पसंद है।

मोटा अफ़सर : (**लड़के के पास जाकर उसके सिर पर हाथ फेरते हुए**) लो भला, गंगा सेठ यहाँ आये हुए हैं और मुझे मालूम नहीं ? (**नौकर से**) अभी तो ठहरेंगे न ?

नौकर : हाँ-आँ।

मोटा अफ़सर : (**व्यर्थ ही हँसकर**) तो यह कुत्ता उनका निकला। (**छोटे अफ़सर से**) रामसिंह, तुम कितने गधे हो ! तुम्हें यह भी मालूम नहीं कि यह कुत्ता किसका है। (**लड़के को पुचकारते हुए**) देखो तो कितना शानदार कुत्ता है ! कैसा प्यारा, नन्हा-

मुन्ना। वाह भाई, वाह ! (**नौकर से**) लो भाई, इसे संभाल कर ले जाओ। और सुनो, गंगा सेठ को मेरी याद दिलाना या तुम रहने दो, मैं खुद ही उनसे मिलने आऊँगा। कलकत्ते जाकर बस गये तो क्या हुआ, मुझे भूल थोड़े ही गये होंगे।

नौकर लड़के का हाथ पकड़कर उसे अपने साथ ले जाता है। भीड़ हँसती है।

एक अभिनेता : बहुत अच्छे ! (**जेबकतरे से**) हाँ तो श्रीमानजी, अब आपका हरजाना कौन देगा ?

मोटा अफ़सर : (**जेबकतरे को डंडा जमाकर**) मैं दूँगा इसका हरजाना। बेंचो, बदमाशी करता है और हरजाना माँगता है ! अब दफ़ा हो जा यहाँ से, नहीं तो मार-मार के ढिबरी टाइट कर दूँगा तेरी। हरामी कहीं का ! (**भीड़ से**) और आप लोग भी फूटिये यहाँ से। यहाँ कोई रंडी नाच रही है ? चलिये। जाइये। (**छोटे अफ़सर से**) चल भाई रामसिंह ! बेकार में साले ने मूड खराब कर दिया।

दोनों अफ़सर जाने लगते हैं कि अचानक मंडली के शेष अभिनेता एक गोल दायरा बनाकर उन्हें घेर लेते हैं और नाचने लगते हैं।

समूह गान : गिटपिट गिटपिट, गिरगिट गिरगिट
गिरगिट गिरगिट, गिटपिट गिटपिट
एक रंग से काम न चलता
एक ढंग से काम न चलता
चटपट रंग बदल लो भाई
चटपट ढंग बदल लो...
गिटपिट गिटपिट, गिरगिट गिरगिट
गिरगिट गिरगिट, गिटपिट गिटपिट...

औरत

जन नाट्य मंच

दिल्ली

'औरत' का प्रथम नुक्कड़-मंचन 'जन नाट्य मंच', दिल्ली द्वारा 1978 में रूपनगर (दिल्ली) में किया गया ।

इस प्रस्तुति में भाग लेने वाले कलाकारों के नाम :

माला हाशमी
राकेश सक्सेना
मनीष मनोजा
एन० के० शर्मा
रथिन दास
सुभाष त्यागी
सफ़दर हाशमी

गोलाकार अभिनय-स्थल । सात अभिनेता एक-दूसरे के कंधों पर हाथ रखे वृत्ताकार रचना में घूमते हुए एक छोर से प्रवेश करते हैं । उनके बीच में छुपी एक अभिनेत्री । केंद्र में आकर रुकते हैं । एक साथ पलटकर दर्शकों की ओर मुँह कर के बैठते हैं । अभिनेत्री बीच में खड़ी दिखायी देती है ।

अभिनेत्री : मैं एक माँ/एक बहन/एक औरत हूँ/एक औरत जो न जाने कब से...!

अभिनेता-1 : नंगे पाँव रेगिस्तानों की धधकती बालू में/भागती...रही है ।

अभिनेत्री : मैं सुदूर उत्तर के गाँवों से आयी हूँ ।

अभिनेता-2 : एक औरत जो न जाने कब से धान के खेतों और चाय के बागान में अपनी ताक़त से ज़्यादा मेहनत करती आयी है ।

अभिनेत्री : मैं पूरब के अँधेरे खँडहरों से आयी हूँ/जहाँ मैंने न जाने कब से नंगे पाँव अपनी मरियल गाय के साथ सुबह से शाम तक खलिहानों में दर्द का बोझ उठाया है ।

अभिनेता-3 : उन बंजारों में से/जो तमाम दुनिया में भटकते फिरते हैं/एक औरत जो पहाड़ों की गोद में बच्चे जनती है/जिसकी बकरी मैदानों में कहीं मर जाती है/और वह बैन करती रह जाती है ।

अभिनेत्री : मैं वह मज़दूर औरत हूँ

अभिनेता-4 : जो अपने हाथों से फ़ैक्ट्री में भीमकाय मशीनों के चक्के घुमाती है/वह मशीनें जो उसकी ताक़त को/ऐन उसकी आँखों के सामने/हर दिन नोंचा करती है/एक औरत जिसके ख़ून जिगर से/ख़ूँख़ार कंकालों की प्यास बुझती है/एक औरत जिसका ख़ून बहने से/सरमायेदार का मुनाफ़ा बढ़ता है ।

अभिनेत्री : एक औरत जिसके लिए तुम्हारी बेहया शब्दावली में

अभिनेता-5 : एक शब्द भी ऐसा नहीं जो उसके महत्व को बयान कर सके । तुम्हारी शब्दावली उसी औरत की बात करती है/जिसके हाथ साफ़ हैं/जिसका शरीर नर्म है/जिसकी त्वचा मुलायम है/और जिसके बाल ख़ुशबूदार हैं ।

अभिनेत्री : मैं तो वह औरत हूँ

अभिनेता-6 : जिसके हाथों को दर्द की पैनी छुरियों ने/घायल कर दिया है/एक औरत जिसका बदन तुम्हारे अंतहीन/शर्मनाक और कमरतोड़ काम से टूट चुका है/एक औरत जिसकी खाल में/रेगिस्तान की झलक दिखायी देती है/जिसके बालों से फ़ैक्ट्री के धुएँ की बदबू आती है।

अभिनेत्री : मैं एक आज़ाद औरत हूँ।

वृत्त के बाहर निकलती है : मुट्ठी तानकर आगे किये हुए। बाक़ी अभिनेता भी उसके पीछे मुट्ठी ताने एक घुटना टेके एक पैर आगे बढ़ाकर बैठते हैं।

अभिनेता-1 : एक औरत जो आज.../अपने कामरेडों, भाइयों के साथ

अभिनेता-2 : काँधे से काँधा मिलाकर/मैदान पार करती है।

अभिनेता-3 : एक औरत जिसने मज़दूर के/मज़बूत हाथों की रचना की है।

अभिनेता-4 : और किसान की बलवान भुजाओं की।

बाक़ी अभिनेता वैसे ही बैठे रहते हैं, अभिनेत्री उनके बीच इधर-उधर घूमकर संवाद बोलती है।

अभिनेत्री : मैं ख़ुद भी एक मज़दूर हूँ/मैं ख़ुद भी एक किसान हूँ/मेरा पूरा जिस्म दर्द की तसवीर है/मेरी रग-रग में नफ़रत की आग भरी है/और तुम कितनी बेशर्मी से कहते हो/कि मेरी भूख एक भ्रम है/और मेरा नंगापन एक ख़्वाब/एक औरत जिसके लिए तुम्हारी बेहूदा शब्दावली में/एक शब्द भी ऐसा नहीं/जो उसके महत्व को बयान कर सके।

बाक़ी अभिनेता पलटकर फिर वृत्ताकार आकृति में एक-दूसरे की ओर मुँह करके बैठते हैं।

अभिनेता-5 : एक औरत जिसके सीने में ग़ुस्से के फफकते नासूरों से भरा/एक दिन छुपा है।

अभिनेता-4 : एक औरत जिसकी आँखों में आज़ादी की आग के लाल साये/लहरा रहे हैं।

अभिनेत्री : एक औरत जिसके हाथ काम करते-करते सीख गये हैं/लाल झंडा कैसे उठाया जाता है। (**लाल झंडा उठाती है।**)

सूत्रधार : आइये, आपको एक कहानी सुनायें, छोटी-सी कहानी/छोटी-सी बिटिया की छोटी-सी कहानी।

औरत : छोटी अ से अनार, बड़े आ से आम/अ से अनार, बड़े आ से आम/आम-अनार-अनार-आम छोटे अ से अनार...।

बाप : (**एक अभिनेता उठता है, बाप के अभिनय में**) मुन्नी...मुन्नी... मुन्नी, कहाँ गयी तू ? तुझे चिलम भरने को दी थी और अब तक नहीं लौटी।

औरत : (**पास आते हुए**) अ से अनार...आ से आम।

बाप : क्यों री, यह घर है या स्कूल...चिलम भर दी ? घंटा-भर हो गया काम से आये, कब तक मैं यूँ ही बैठा रहूँगा ?

औरत : मैं याद कर रही थी। मास्टरजी कहते हैं, घर पे पढ़ा करो। समझ न आये तो अपने बाबा से पूछो।

बाप : बाबा से पूछो ! बाबा से पूछो तो घर बैठो और काम करो। क्या करेगी स्कूल जा के ? तुझे कौन दफ़्तर दबाना है ?

औरत : मास्टरजी कह रहे थे, कल किताब ज़रूर लाना, नहीं तो नाम काट देंगे। और कह रहे थे, स्कूल की वर्दी धुली हुई होनी चाहिए, इंस्पेक्टर साहब आने वाले हैं।

बाप : हरामज़ादों को बच्ची का मन बहलाने के सिवा कोई काम है ? यहाँ दो जून खाने के दाने नहीं हैं घर में, बरसात आने वाली है और छप्पर अब तक ठीक नहीं करा पाये, इन्हें धुली वर्दी चाहिए ! कल से स्कूल बंद।

औरत : नहीं बाबा, मैं स्कूल जाऊँगी...।

बाप : चुप रह ! तेरे भाई को स्कूल भेज रहा हूँ उसी में कमर टूटी जा रही है...।

औरत : मैं स्कूल जाऊँगी...स्कूल।

बाप : घर का काम किया कर...दस साल की होने को आयी। ढोंग-की-ढोंग स्कूल जायेगी...हूं ! कुछ काम-वाम ढूँढ़ दूँगा तेरे लिए। यह आवाराओं की तरह उछल-कूद बंद कर।

औरत : बाबा, एक रस्सा ला दो शाम को खेलने के लिए...।

बाबा : यही तो आफ़त है, बच्चों को स्कूल भेजना ही नहीं चाहिए। पढ़ाई के साथ खेल-कूद — एक बला हो तो...।

औरत : रस्सा ला दो बाबा, रस्सा...!

बाबा : गले में लटका के मर क्यों नहीं जाती, कम्बख़्त ? तेरी माँ मर रही है तू भी मर, पीछा छूटेगा। लड़का है, किसी तरह पाल लूँगा। कहाँ से लाऊँ तेरे लिए ? तनख़ाह के नाम पे पिछले पाँच साल से एक पैसा नहीं बढ़ा, बढ़ाने की बात भी की तो सालों ने तालाबंदी की धमकी दे दी और एक तरफ़ ये है...किताब चाहिए, खिलौने चाहिए। चल उठकर बासन माँज, हरामज़ादी कहीं की स्कूल

जायेगी !

औरत : जाऊँगी, जाऊँगी ! सुबह-सुबह सारे बच्चे सुंदर कपड़े पहनकर बस में बैठकर जाते हैं। मैं भी जाऊँगी।

बाबा : उन बच्चों की जितनी फ़ीस है उतनी तेरे बाप की पगार है। चल उठ और लाला से जाकर आटा ले आ।

औरत : बाबा, वह आटा नहीं देता।

बाबा : उसकी साले की...उधार देता है, कोई भीख नहीं देता।

औरत : पर बाबा, उसका बेटा कहता है...।

बाबा : क्या कहता है ?

औरत : कहता है...कहता है...अगर उधार में आटा चाहिए तो दुकान बंद होने के बाद अकेले में आना।

बाबा : सूअर का बच्चा ! अगर उधार ना चुकाना होता...।

बाबा और औरत दोनों अपनी मुद्रा में 'फ्रीज' हो जाते हैं। सूत्रधार उठकर दर्शकों से संबोधित होता है।

सूत्रधार : एक दिन बाबा की फ़ैक्ट्री में तालाबंदी हो गयी। कल तक वह लाल झंडे यूनियन को गाली देते थे, आज वही झंडा हाथ में लेकर चिल्लाते हैं—'हड़ताल हमारा नारा है'।

औरत : मेरे साथ अब इतना बुरा सलूक नहीं होता, लेकिन बोझ मैं अब भी हूँ। इसीलिए मेरा लगन तय हुआ है। आज फेरे हैं। लड़का भैया की मील में 175 रुपया पाता है।

तीन अभिनेता उठते हैं। एक रामनाम का दोशाला डाले पंडित है, दूसरा दूल्हा, तीसरा ससुर। बाबा दायरे में बैठ जाता है। पंडित औरत का पल्लू दूल्हा की पैंट से बाँधता है। दोनों बीच में बैठे अभिनेताओं का एक फेरा करते हैं। पूरा होने पर पंडित के सामने रुकते हैं।

पंडित : सास-ससुर की आज्ञा मानोगी, पति को साक्षात भगवान जानोगी। पहले उन्हें खिलाओगी, फिर खुद खाओगी। पति-ससुर अन्याय भी करें तो उसे न्याय मानोगी, कभी पलटकर उत्तर नहीं दोगी। आँखें नीची रखोगी, घर का काम-काज संभालोगी।

पति : फ़ौरन कोई काम तलाश करोगी। सवेरे ही सब्ज़ीमंडी से साग-तरकारी लाओगी, फिर कुएँ से पानी। बाबा का हुक्का भरोगी, झाड़ू-पोंछा, चौका-चक्की सब तुम्हीं संभालोगी।

ससुर : इस घर में आराम करने नहीं, बोझ बँटाने आयी है। अपनी सास को आराम दोगी, सारा काम संभालोगी।

पंडित : तथास्तु।

पंडित, पति और ससुर अपनी-अपनी मुद्राओं में थम जाते हैं। औरत अपना पल्लू खोलती है।

सूत्रधार : इस तरह गृहस्थी की चक्की में पिसते-पिसते आठ बरस हो गये।

ससुर और पति तथा पंडित वापस दायरे में बैठते हैं।

औरत : चार बच्चे हैं। कमज़ोर, गंदे और चीं-पीं करते हुए। 25 साल की उमर में 40 साल की बुढ़िया लगती हूँ। मुँह-अँधेरे जगती हूँ। घर का काम-काज करती हूँ, चक्की पर जाती हूँ गेहूँ साफ़ करने, दोपहर को चौका-बरतन कर फिर काम पर जाती हूँ, शाम ढले लौटती हूँ। फिर सारा काम। ससुरजी के मरने के बाद से ही मेरा आदमी शराबी हो गया है। (**पति बैठे-बैठे बोलता है—'हरामज़ादी!'**) रात-दिन मारपीट और गाली-गलौज करता है। थाने में नाम दर्ज है उसका।

पति शराब की बोतल लेकर उठता है।

पति : अरी ओ हरामज़ादी ! यह मुन्ना क्यों रोये जा रहा है ?

औरत : जाग गया है तुम्हारे दहाड़ने से।

पति : चुप करा इसे, नहीं होता तो उठाकर बाहर फेंक दे सूअर के बच्चे को ! (**अपनी मुद्रा में थम जाता है।**)

सूत्रधार : क्या होगा इन सूअर के बच्चों का ? दिन-भर आवारा घूमते हैं। पढ़ाई-लिखाई का कोई प्रबंध नहीं। बड़े होकर अपने बाप पर ही जाना है इन्हें।

औरत : बड़े होंगे तो काम की तलाश में मारे-मारे भटकेंगे, न जाने कहाँ-कहाँ जायेंगे ! मुझसे दूर। मैं हमेशा की अकेली, हमेशा की खामोश, किसके सहारे जियूँगी ? चक्की से जवाब मिल गया तो किसके दरवाज़े पर जाऊँगी ? हे भगवान, तू ही कुछ कर।

पति : भगवान क्या कर लेगा ? उसे तेरी तरफ़ देखने की ही क्या पड़ी है ? सेठजी का बँगला उसे पसंद है। सेठानी गोरी-चिट्टी है, भोग भी वह अंगरेज़ी बोतल का लगाता होगा।

औरत : यह उलटी-सीधी न बको। इसी सबके कारण तो यह हाल है। मंदिर जाते, भले मानस की तरह रहते तो घर की सकल ही और होती आज।

पति : हरामज़ादी कहीं की, ज़बान चलाती है ! (**थप्पड़ मारता है। औरत गिर पड़ती है**) आदमी को कहीं आराम ही नहीं। फ़ैक्ट्री से थका-माँदा आता है। फ़ैक्ट्री में सुपरवाईज़र की भौं-भौं, घर में तेरी। दान-दहेज के नाम पे तो बाप को साँप सूँघ गया था, और बेटी है कि होश ही ठिकाने नहीं है। चल उठ, घर का काम-काज कर। बड़ी आयी है हरामज़ादी !

दोनों दायरे में बैठ जाते हैं। सूत्रधार उठता है।

सूत्रधार : बाप के, भाई के और खाविंद के/ताने-तिश्नों को सुनना तमाम उमर/बच्चे जनना सदा भूखे रहना सदा करना मेहनत हमेशा कमर तोड़कर/और बहुत से ज़ुल्मो सितम औरत के हिस्से आते हैं/कमज़ोरी का उठा फ़ायदा गुंडे उसे सताते हैं/दरोग़ा और नेता-वेता दूर से यह सब तकते हैं/क्योंकि रात के परदे में वह खुद भी यह सब करते हैं/औरत की हालत का यह तो जाना-माना क़िस्सा है/और झलकियाँ आगे देखो जो जीवन का हिस्सा है।

औरत दायरे से उठती है, हाथ में कुछ किताबें लिये हुए।

औरत : मैं औरत का एक रूप हूँ। स्कूल पास किया है। घर वालों को बहुत मुश्किल से रोम कॉलेज भेजने के लिए राज़ी किया है। वहाँ जा रही हूँ दाख़िला कराने।

बाक़ी सातों अभिनेता उठकर दायरा बनाते हैं।

पहला : ट्रिन...ट्रिन।

दूसरा : नेक्स्ट।

तीसरा : अगले कैंडीडेट को अंदर भेजो।

औरत आगे बढ़ती है।

औरत : नमस्ते !

चौथा : गुड मार्निंग सर कहो।

पाँचवाँ : न जाने कहाँ से यह फटीचर उठकर आ जाते हैं !

छठा : ओह, दीज़ रैंचिज़ !

पहला : हम्म् ! तुम्हारे काग़ज़ात ?

काग़ज़ात देती है।

दूसरा : हिंदी।

तीसरा : संस्कृत।

चौथा : गृहविज्ञान।

पाँचवाँ : संगीत।

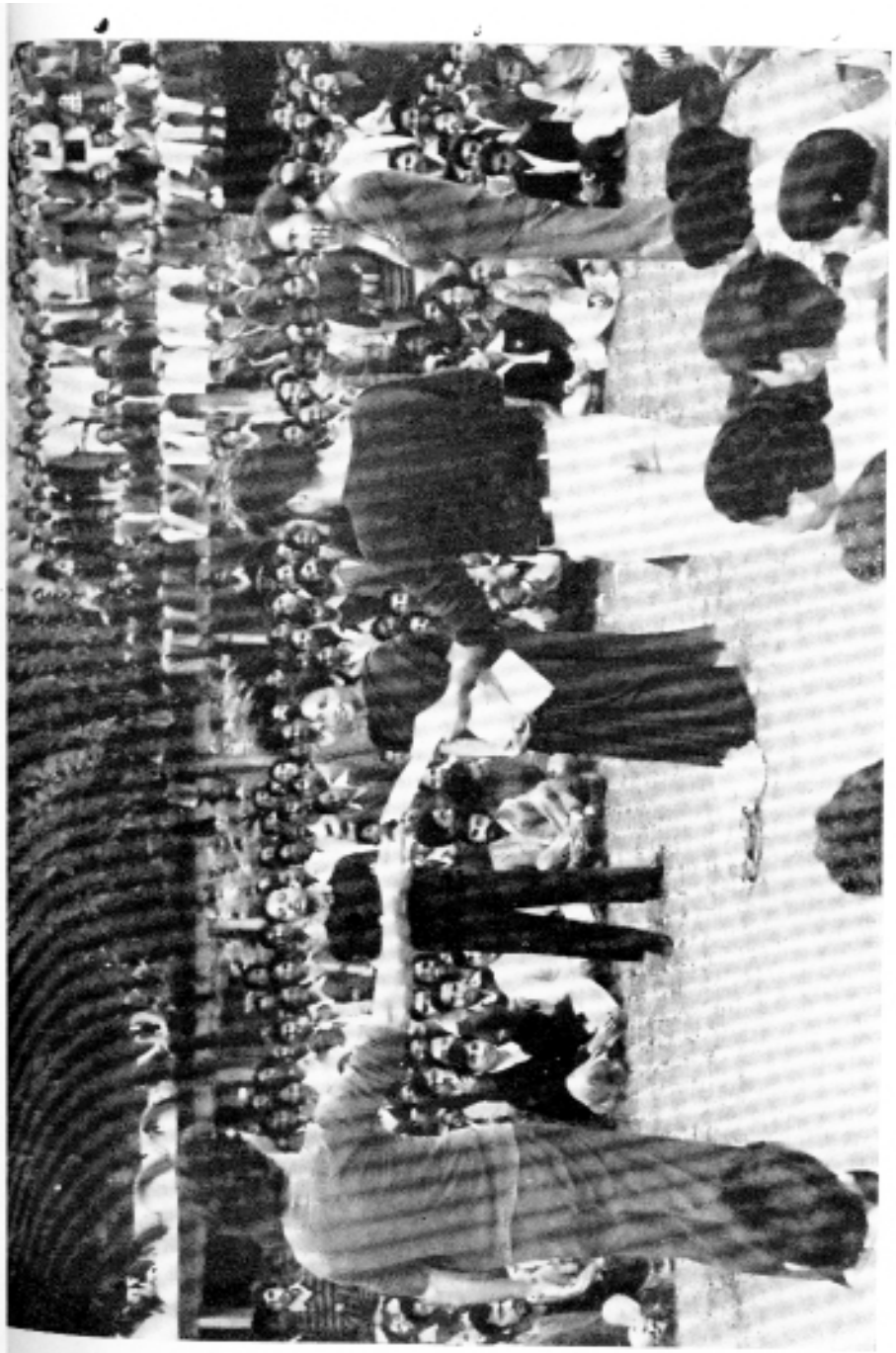

जन नाट्य मंच, दिल्ली की नाट्य-प्रस्तुति 'औरत'

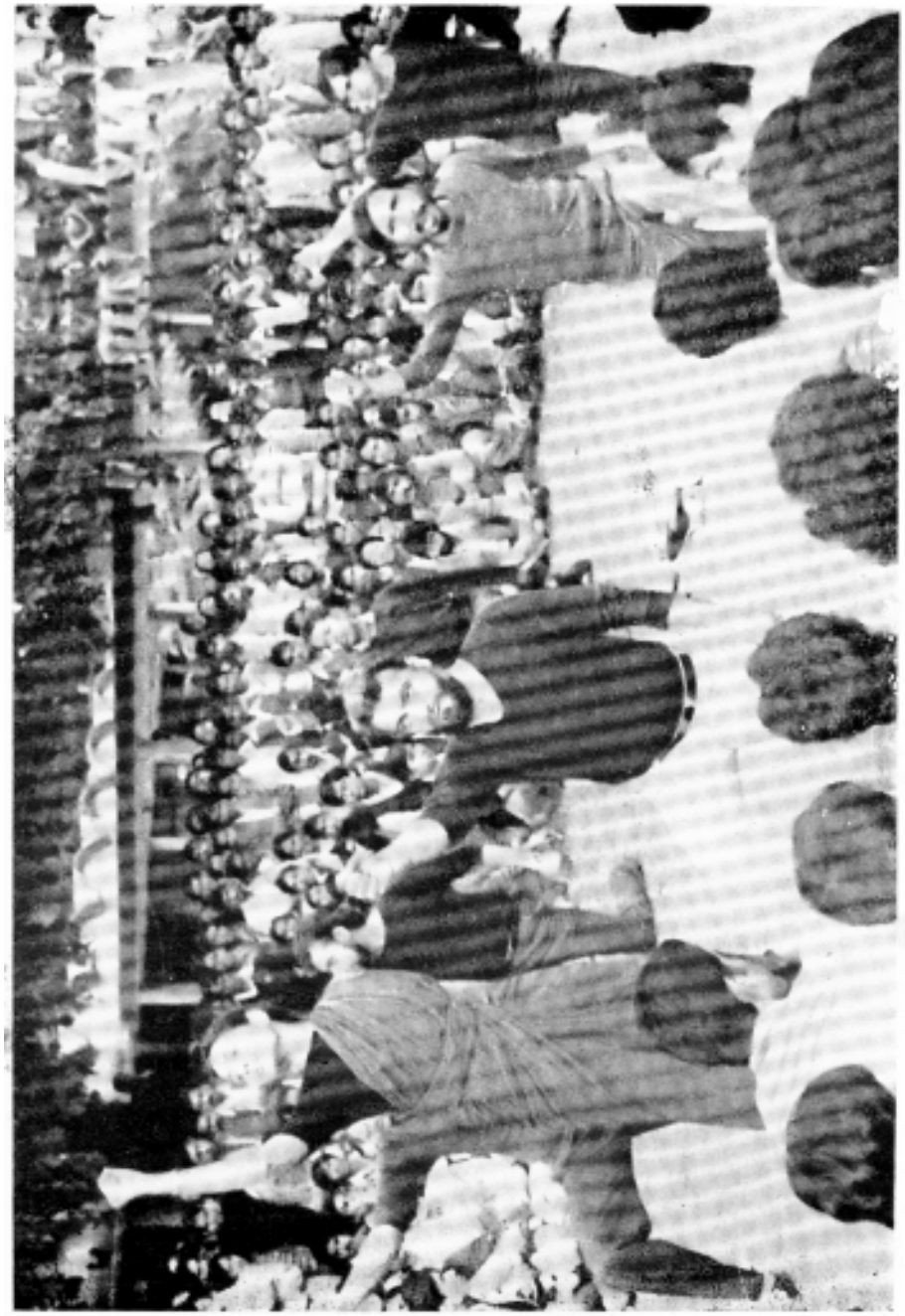

छठा : चित्रकला।

पहला : व्हाट इज आल दिस ?

दूसरा : भई यहाँ तो मिलिट्री साइंस और चाईल्ड साइकोलोजी में ही सीटें खाली हैं।

छठा : अब तुम्हारा क्या होगा ?

औरत : गुड मार्निंग सर, मुझे दाखिल कर लीजिये, मैं पढ़ना चाहती हूँ।

पाँचवाँ : गुड, गुड, यू सीम आल राइट।

चौथा : लेकिन तुम क्यों पढ़ना चाहती हो ?

दूसरा : यहाँ तो लिखा है, तुम्हारे डैडी को 250 रुपये मिलते हैं।

छठा : तुम्हें मालूम है, यूल ब्राइनर की चाइल्ड साइकोलोजी इन गिनी बसाऊ

चौथा : अस्सी रुपये की आती है और यह किताब हर विद्यार्थी को खरीदनी जरूरी है ?

पाँचवाँ : इसके अलावा जान हैम्बरगर की मिलिट्री साईंस इन प्री-वैदिक टाईम्ज 13.45 रुपये की आती है।

छठा : कॉलिज की महीना फ़ीस 20 रुपये।

पहला : बिल्डिंग फंड के 15 रुपये।

पाँचवाँ : बागों और बिजली-पानी के 10 रुपये।

दूसरा : कुल मिलाकर 45 रुपये।

चौथा : दे पाओगी ?

औरत : हाँजी, कुछ-न-कुछ करूँगी। ट्यूशन पढ़ाकर दूँगी।

तीसरा : ट्यूशन पढ़ाओगी तो अपनी पढ़ाई कब करोगी ? (**सब हँसते हैं**) फ़ेल हो गयीं तो कॉलिज का नाम बदनाम होगा।

पाँचवाँ : खैर, तुम्हें दाखिल किया जाता है।

पहला : इतना याद रखना, इस कॉलिज के अपने नियम हैं, एक परंपरा है।

चौथा : लड़कियाँ और लड़के एक-दूसरे से बात नहीं करते।

पाँचवाँ : लड़कियाँ कैंटीन में नहीं जातीं।

दूसरा : राजनीति और हड़तालें बिलकुल बरदाश्त नहीं की जातीं, समझ गयीं ?

तीसरा : जाओ, कल से क्लास में आना।

सब : बाहर फ़ीस जमा करा दो।

सब अभिनेता आगे बढ़कर फिर दायरे में बैठते हैं।

औरत : खैर दाखिला हुआ, पर आजकल लड़कियों के लिए कॉलिज आना-जाना कोई हँसी-खेल नहीं है। लगता है, पूरा शहर शोहदों और

गुंडों से भरा पड़ा है। लड़की देखते ही भेड़ियों की तरह झपटते हैं।

ससुर और पति की भूमिका करने वाले अभिनेता एक तीसरे अभिनेता के साथ उछलकर खड़े होते हैं, गले में भड़कीले रूमाल बाँधे। पंडित का पात्र करने वाला पुलिस कैप लगाये हाथ में छड़ी लिये खड़ा होता है। बाक़ियों को देख मुसकराकर ठुमके लगाता है।

गुंडे : (**गाते हैं**) चली गोरी कॉलिज से घर को चली।

तीनों उसके साथ छेड़ख़ानी करते हैं।

औरत : ऐ पुलिस वाले, खड़े दाँत क्या निकाल रहे हो ? रोकते क्यों नहीं इन्हें ?

गुंडे पहले डरकर 'पुलिस-पुलिस' चिल्लाते भागते हैं। फिर जेब से एक नोट निकालकर पुलिस वाले को देते हैं। पुलिस वाला पलटकर औरत की तरफ़ पलटता है।

पुलिस : अरी तमीज़ से बात कर, बड़ी आयी है दरोगन ! ऐसी ही सीता है तो घर में बैठ, क्यों भटक रही है गली-कूचों में ? और यह सब पसंद नहीं तो टैक्सी में आया-जाया कर।

गुंडे : टैक्सी-टैक्सी !

चारों अपनी-अपनी मुद्रा में थम जाते हैं।

सूत्रधार : यह रोज़ ही होता है, शहरी हँसते रहते हैं। शरीफ़ आदमी गुंडों से घबराते हैं और पुलिस में तो वर्दीधारी गुंडे ही भरे पड़े हैं।

औरत : कॉलिज की पढ़ाई किसी तरह राम-राम करके खतम हुई। बड़े घरों से आने वाले फ़र्राटे से अंगरेज़ी बोलने वाले लड़के-लड़कियों को अच्छे नंबर मिले। मैं रो-धोकर पास हुई। तीसरी श्रेणी में। फिर नौकरी की तलाश। एक जगह से इंटरव्यू का बुलाया आया। अंदर गयी तो देखा, कल तक कॉलिज में आवारागर्दी करने वाला एक सेठ का लड़का आरामकुरसी पर बैठा था, वही मालिक था उस दफ़्तर का, जहाँ नौकरी निकली थी। लेकिन मैं समझ नहीं पायी कि इंटरव्यू लेने वाला मेरे शरीर में दिलचस्पी रखता था या मेरी डिग्री में !

पहला गुंडा आता है।

गुंडा : हम्...मिस, आपकी तो थर्ड डिवीज़न है, टाईपिंग-शार्टहैंड में

क्या स्पीड है आपकी ?

औरत : सर, टाईपिंग-शार्टहैंड वगैरा आती नहीं।

गुंडा : तो फिर क्या आता है ? दफ़्तर के काम-काज का पंद्रह साल का अनुभव है ?

औरत : सर, अभी तो मेरी उम्र ही 20 साल की है। वैसे कॉलिज में कबीर के दोहे और चंद्रगुप्त मौर्य के साम्राज्य के बारे में पढ़ाया गया था, वह सब याद है मुझे।

गुंडा : दयानंद आश्रम नहीं है यह, और ना ही पर्यटक केंद्र, यहाँ इम्पोर्ट-एक्सपोर्ट का धंधा होता है। आपकी शिक्षा किसी काम की नहीं। आप जा सकती हैं।

बाक़ी सब दोहराते हैं, "आप जा सकती हैं।" पहला गुंडा दायरे में बैठता है।

औरत : आप जा सकती हैं, हर जगह यही जवाब मिलता है। अब इस बी० ए० की डिग्री का क्या करूँ ? (**सभी पात्र खड़े होकर जुलूस बनाते हैं**) लेकिन एक दिन मैंने देखा, बेरोज़गारों का जुलूस जा रहा था। मैं भी उनके साथ शामिल हो गयी।

जुलूस में जा मिलती है, नारे लगते हैं : "बेरोज़गारी दूर करो...बेरोजगारी दूर करो...बेरोज़गारी दूर करो...!"

: लेकिन अचानक उधर से पुलिस आ गयी (**पात्र ख़ुद को लाठियों से बचाने का अभिनय करते हैं**) एक-एक को दस-दस ने दबोच लिया। मुझे भी कई लाठियाँ पड़ीं, औरों के साथ मुझे भी डाल दिया गया जेल में (**पात्र खड़े होकर गोल दायरा बनाते हैं, हाथ ऊपर उठाये, एक गोल जेल के कमरे की तरह। उनके बीच में क़ैद औरत**) दंगा करने के अपराध में। मैं समझ नहीं पायी कि ऐसा क्यों हुआ ? चार दिन जेल काटने के बाद घर आयी तो पिता-जी कहने लगे—

बाबा का अभिनय करने वाला अभिनेता उठता है।

बाबा : लड़की बदचलन हो गयी है। मैं कहता था, मत भेजो कॉलिज। बाहर की हवा लगते ही पर निकल आयेंगे। अब मैं बिरादरी को क्या मुँह दिखाऊँगा ? ऐसी लड़की को वर कहाँ मिलेगा ? हे राम क्या ज़माना आ गया है !

दोनों वैसे ही थम जाते हैं। सूत्रधार उठता है।

सूत्रधार : बीवी हो, माँ हो या किसी घर की बेटी हो वह, कॉलिज में पढ़ने

जाती हो चाहे कोई लड़की, हर जगह इस समाज में रहती है वह
पीछे/मुँह पर लगे हैं ताले/नज़र उसकी है नीचे।

दोनों आकर दायरे में बैठ जाते है। सबके साथ गाते हैं।

: पर सबसे बुरा हाल है उस बदनसीब का/करके मजूरी जो कि
चलाती हो जीविका/स्कूल में हो, फ़ैक्ट्री में या हो खेत में/
रहती है हमेशा ही जुल्म की चपेट में/आओ दिखाऊँ तुमको मैं इक
ऐसी ही नारी/इक फ़ैक्ट्री में काम जो करती है बेचारी।

सूत्रधार और दो अभिनेता तथा औरत फ़ैक्ट्री में काम करने का अभिनय करते हैं। बाक़ी चारों अभिनय-स्थल के बाहर जाकर दर्शकों के पास जा बैठते हैं। मालिक का अभिनय करने वाला अभिनेता आता है।

मालिक : बुढ़िया, क्या हाथ टूट गये हैं तेरे ? हट्टी-कट्टी नज़र आ रही है, फिर भी हरामख़ोरी !

औरत और ज़्यादा ज़ोर से काम करती है।

मालिक : अरी नहीं है तेरे बस का तो घर बैठ, और सैकड़ों मिल जायेंगे, बाहर लाइन लगाये खड़े रहते हैं।

औरत : सबके बराबर का काम करती हूँ, फिर भी कम दिहाड़ी देते हो। ऊपर से डाँट-डपट ! यह कहाँ का न्याय है ?

मालिक : ज़बान चलाती है, हरामज़ादी ! (**मारने के लिए छड़ी उठाता है।**)

सूत्रधार : ए, ए, सेठजी होश में !

दूसरा : हाथ न उठाना।

तीसरा : बहुत बुरा होगा।

मालिक : अच्छा बेटा, अभी दिखाता हूँ, यहाँ का मालिक कौन है ! ऐ बुढ़िया, बाहर निकल, तेरी नौकरी खत्म।

औरत : नहीं सरकार, ऐसा जुल्म मत करो। मैं तुम्हारे पैर पड़ती हूँ, मेरे बच्चे भूखे मर जायेंगे।

सूत्रधार : अरे हाथ क्यों जोड़ती है, क्यों ख़ुद को गिराती है ? यूनियन किस काम आयेगी ? मज़ाक समझ रखा है, जब मरज़ी जिसको निकाल देंगे। तू अरज़ी लिख, हम सब तेरे साथ हैं।

औरत : न भैया, यह सब मुझसे नहीं होगा। हमारे यहाँ औरतें चिट्ठी न लिखा करें, बिरादरी में नाक कट जायेगी। मैं जाकर सेठजी से माफ़ी माँग लूँगी। भगवान ज़रूर कुछ करेंगे।

दूसरा : क्या बात करती है ! अरी भगवान ही तेरे होते तो इस बुढ़ापे में दो रोटी के लिए यह दिन दिखलाते ? तू लड़, हम सब तेरे साथ हैं।

औरत : क्यों मेरे दुश्मन बने हो ? तुम्हारा तो काम ही है फ़िज़ूल में हुल्लड़-बाज़ी करना। मेरे पास न लड़ने की ताक़त है, न फ़ुरसत। मैं सेठजी से माफ़ी माँग लूँगी।

तीनों : मान जा।

औरत दौड़कर मालिक के पास जाकर पैरों पर गिर पड़ती है।

औरत : सरकार, मैं तुम्हारे पैर पड़ती हूँ, मुझसे ग़लती हो गयी। इन लफ़ंगों की वजह से मुझ पर क्यों नाराज़ होते हो ? मेरा पूरा घर-बार तुम्हारी दया पर ज़िंदा है। मैं तुम्हारे पैर पड़ती हूँ, सरकार !

मालिक : बुढ़िया, मुँह से निकली बात पत्थर की लकीर है। कह दिया, नहीं है तेरे लिए नौकरी। जा अपने हिमातियों के पास। माँग उनसे नौकरी। हिम्मत है तो रखवा दें काम पर।

औरत : सरकार...!

मालिक : (**चिल्लाकर**) चली जा...!

तीनों : (**दर्शकों से**) भेड़िये से रहम की उम्मीद छोड़ दे
अपनी इन सदियों पुरानी बेड़ियों को तोड़ दे
आ चुका है वक़्त अब इस पार या उस पार का
राज़ ज़ाहिर हो चुका है असली ज़िम्मेदार का।

औरत लड़खड़ाते क़दमों से वापस आती है। मज़दूर नारे लगाते हैं।

मज़दूर : हर ज़ोर-ज़ुल्म की टक्कर में संघर्ष हमारा नारा है !

मालिक : ए, यह काम कैसे रुक गया ? चलो, काम से लगो, मेरा आर्डर है।

सूत्रधार : जब तक इसे काम पर नहीं लोगे, काम शुरू नहीं होगा।

मालिक : कह दिया, नहीं है इस बुढ़िया के लिए जगह।

तीनों : तो पूरी हड़ताल होगी।

मालिक : अच्छा, यह तेवर है ! (**चीख़ता है**) शेरा, गब्बर, पुलिस ! (**बाक़ी तीनों अभिनेता भागे आते हैं। मालिक के इशारे पर तीनों मज़दूरों पर वार करते हैं। वह गिरते हैं, औरत झुककर लाल झंडा उठाती है।**)

औरत : हर ज़ोर-ज़ुल्म की टक्कर में संघर्ष हमारा नारा है।
हर ज़ोर-ज़ुल्म की टक्कर में...!

सभी अभिनेता उठकर नारा लगाते हैं।

सब : संघर्ष हमारा नारा है।

सूत्रधार : यह वक़्त की आवाज़ है।

सब गाते हैं—"मिल के चलो, यह ज़िंदगी का राज है। मिल के चलो।"

जनता पागल हो गयी है

शिवराम

'जनता पागल हो गयी है' का नुक्कड़-मंचन 'दिशा', भागलपुर द्वारा 12 मई, 1978 को भागलपुर के घंटाघर चौक पर किया गया। इस प्रस्तुति के भागीदार :

जनता : मुकुल
सरकार : चन्द्रेश
पूँजीपति : श्रीचंद्र कुमार
पुलिस : महेंद्र पांडेय
पागल : राजेश कुमार

गोलाकार अभिनय-स्थल। पुलिस आकर घेरे में परेड करना शुरू कर देती है। तभी सरकार अत्यंत रौबीले ढंग से प्रवेश करती है। चेहरे पर चिंता के भाव तैर रहे हैं।

सरकार : पुलिस...पुलिस...सुनती नहीं क्या ?
पुलिस : जी हाँ मेहरबान, क़द्रदान, क्या हुक्म है मेरे आक़ा ?
सरकार : **(गोल में घूम-घूमकर)**
अकाल की चपेट है, जनता भूखे पेट है
आ गयी घड़ी चुनाव की, आ गयी घड़ी चुनाव की।...
मिलेंगे हम अवाम से, चले न जायें काम से,
गली-गली में शोर है, विरोधियों का ज़ोर है
आ गयी घड़ी चुनाव की, आ गयी घड़ी चुनाव की।...
जनता है जनार्दन, करेंगे उसका कीर्तन
आ गयी घड़ी चुनाव की, आ गयी घड़ी चुनाव की।...
पुलिस : बेचैन होकर आपने जनता को पुकारा,
कहते हैं अक़्लमंद को काफ़ी है इशारा।
जनता को हुक्म देता हूँ, दरबार में आये,
सरकार याद करती है, आदाब बजाये।
सरकार : नहीं, हम तो सेवक हैं जनता के,
जायेंगे उसके हुज़ूर में चलकर।
लाओ कोई माक़ूल सवारी,
करो सुरक्षा की तैयारी।
पुलिस : लीजिये सरकार ! वह सवारी है तैयार। चलिये मेहरबान, ओ जन-जन के भगवान !

पुलिस घोड़ा बन जाती है। सरकार उस पर बैठ जाती है। जनता का प्रवेश।

जनता : ओ मेरी सरकार, अन्नदाता माई-बाप,
पाँच बरसों में दिखायी दीं नहीं एक बार आप।
मालदारों ने घुड़ककर छीन ली रोटी मेरी,

चूस ली हड्डी, चबायी जिस्म की बोटी मेरी ।
खेत सूखे, पेट सूखे, गाँव है बीमार,
हम लोगों की मेहनत, कोठा भरता ज़मींदार ।
देह सूखी, पेट सूखे, सूना है संसार
कोई सुनता नहीं हमारी, क्या बोलें सरकार !
एक आसरा सिर्फ़ तुम्हारा, आये इस दरबार,
दुख हमारे हरो, तुम्हारी महिमा अपरंपार ।

जनता सरकार के पैर पकड़ लेती है । सरकार उसे झटककर गोल के एक ओर खड़ी हो जाती है ।

सरकार : ऐ पुलिस, ये कौन है ? और क्या हमें समझाये है ? इसके एक-एक रंग से मेरे को बदबू आये है । उफ़्...मेरे नाजुक बदन को देखता है घूर-घूरकर । लगा हथकड़ियाँ और नज़र से दूर कर ।

पुलिस जनता को पहचान लेती है और सरकार को धीरे-से बताती है ।

पुलिस : हुज़ूर, ये जनता है, जनता !

सरकार : (**खुश होकर**) ओ...तो तुम जनता हो । पाँच वर्षों के लम्बे अंतराल के बाद आज हम मिले हैं । तुम तो पहचान में ही नहीं आयीं । कितना परिवर्तन आ गया है तुम में ! हम तो तुम्हारे पास ही आ रहे थे । कैसी हो, जनता ?

जनता : (**सरकार के पैरों पर गिरकर**) सरकार...!

सरकार : (**उठाती है**) उठो जनता ! प्रसन्न रहो ! तुम्हारी उम्र लम्बी हो !

जनता : ढोर-डाँगर मर गये सब, खेत पड़े वीरान
तिस पर बनिया और महाजन, माँगे ब्याज-लगान ।
बालक भूखे मरे हमारे, हम कुछ कर न पाये ।
इससे अच्छा हैज़ा फैले, सब-के-सब मर जायें ।

सरकार : धीरज रखो, जनता ! आख़िर महल समाजवाद का धीरे-धीरे बनता । भूखी हो ?

जनता : हाँ ।

सरकार : तो ठीक है । शरीर से भूखी रहो, पर मन से तृप्त । तुम अपने देश के उद्धार के लिए भूखी नहीं रह सकतीं ? और देशों की जनता तो अपने देश के लिए सर कटा देती है । आओ जनता, अपनी सरकार के गले लग जाओ ।

जनता : (**सरकार के पैरों पर गिरकर**) तुम बहुत अच्छी हो, सरकार...!

बहुत अच्छी...!

सरकार : उठो जनता, उठो ।

जनता नहीं उठती है ।

पुलिस : अब उठ भी जा ! हो चुके नख़रे ।

जनता को झटककर सरकार से अलग करती है ।

जनता : हुज़ूर, हर तरफ़ सूखा, भूख, बीमारी, मौत...मैं मर जाऊँगी । सरकार, मैं मर जाऊँगी...।

सरकार : थोड़े दिनों की है परेशानी,
भोगो, करो न आनाकानी ।
मरने की बात, ना करो सनम,
ज़िंदा हैं तुम्हारे दम से हम ।
तुम अगर मर गयीं तो, मर जायेगा वतन भी,
मर जायेंगी बहारें, मर जायेगा चमन भी ।
मर जायेंगे सितारे, मर जायेंगे गगन भी,
मर जायेगी मुहब्बत, मर जायेगा अमन भी ।

जनता : रोटी...हुज़ूर, रोटी !

सरकार : मुझे तुमसे पूरी हमदर्दी है, जनता !

जनता : पूरी ? पूरी नहीं हुज़ूर, रोटी, रोटी ।

सरकार : अच्छा सुनो जनता, अगले महीने चुनाव है न । तुम हमें वोट दो हम तुम्हें रोटी देंगे । तुम्हें हमारा चुनाव-चिह्न याद है न ? हथेली पर पैसा छाप । हाथ तुम्हारे, पूँजी हमारी ।

तीनों फ्रीज्ड हो जाते हैं । पागल का प्रवेश ।

पागल : हे इ सा रे हे इ सा...ज़ोर लगाकर हेइ सा...काम बढ़ा के हेइ सा ...मर जा बेटे खटते-खटते...माँग मत पईसा ! ही-ही-ही...वोट दो । दो ना ! वोट दो...वोट दो...ठोंक दो...ठोंक दो ! इस पुलिस वाले भइया को ठोंक दो, इस ज़ालिम सरकार के दिल पे चोट दो ।

रोता है ।

: इस रेल-हड़ताल में मेरा भाई डाला मार,
मेरा बच्चा चबा गयी, ये ज़ालिम सरकार ।

पुलिस : ऐ पागल ! सूअर के बच्चे ! तुम्हारा दिमाग़ तो ख़राब नहीं हो गया !

पागल : क्या है ये सरकारी कुत्ते ! ऐं...!

चिढ़ाता है ।

पुलिस : स्साला हरामी की औलाद ! कुत्ता कहता है ? चीन्हता नहीं है ? जब उलटे लटकाकर तलुए पर हंटर बजेगा तब समझ में आयेगा।

पागल को मारता है। पागल प्याऊँ-प्याऊँ करता हुआ भागता है।

सरकार : देख जनता, तुझे तरह-तरह के लोग बहकाने आयेंगे, तू उनके बहकावे में मत आना। अभी भी तेरी इज्जत बाकी है न, इनका बस चले तो तेरी लँगोटी भी खींच लेंगे। पुलिस...पुलिस !

पुलिस : जी हाँ मेहरबान, क़द्रदान, क्या हुक्म है मेरे आक़ा ?

सरकार : इस पागल पर कड़ी नज़र रखी जाये। जनता को भड़काता है स्साला। सी० आई० ए० का एजेंट लगता है।

पुलिस : जो हुक्म है मेरे आक़ा ! यह पागल यार है अपनी माँ का। हाजत में कर दूँगा इसे अंदर...ताकि आपको फ़िक्र रहे न फाका।

सरकार : अच्छा जनता, अब हम चलते हैं।

पुलिस और सरकार का प्रस्थान।

जनता : **(निराश होकर)**

मैंने अपना हाथ पसारा, उसने दिया चमकता नारा,
देखी नहीं जिगर की चोट, केवल देखा मेरा वोट।

पुनः पागल का प्रवेश।

पागल : जनता, तू भूखी है ?

जनता : हाँ।

पागल : तो सुन। भूख लगे तो गाना गा। भूख लगे तो गाना गा। यह सरकार बनी है बहरी। तेरे गाने से इसके कान के परदे फट जायें, खर्रा-खर्रा झुलस जाये, तुझे तेरा राज मिल जाये।

जनता : अरे पागल ! गाने से कहीं पेट भरता है ?

पूँजीपति का प्रवेश।

पूँजीपति : पेट भरता है रोटी से, और रोटी मिलती है काम करने से। रोटी खानी है तो, चल मेरे साथ, काम लूँगा, रोटी दूँगा।

जनता : रोटी मिलेगी ? रोटी देगा ? रोटी...रोटी...चल...चल...!

पागल : ये तोंदू तुझे रोटी देगा ? (हँसता है) ये तुझे रोटी नहीं देगा। यह निकालेगा तेरी चमड़ी से तेल और उस तेल से करेगा अपनी तोंद की मालिश...मालिश...मालिश।

पूँजीपति : ऐ पागल, तू यहाँ भी आ गया ?

पागल : क्यों, यह मेरा देश नहीं ? तेरे बाप का है क्या ?

पूँजीपति : अभी बताता हूँ, किसका है ! पुलिस...पुलिस...!

दिशा, भागलपुर की नाट्य-प्रस्तुति 'जनता पागल हो गयी है'

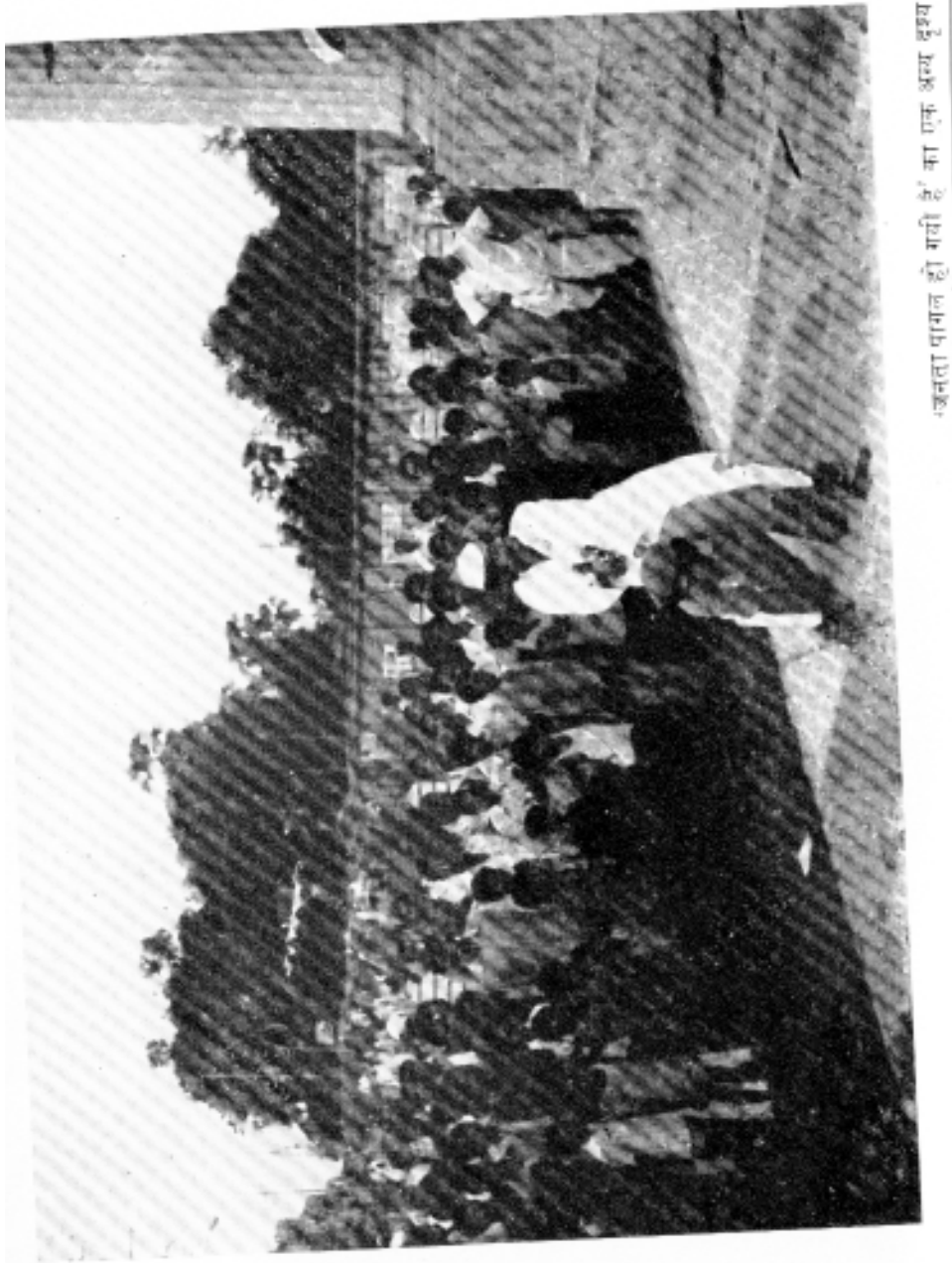

जनता पागल हो गयी है का एक अन्य दृश्य

पुलिस पागल को पीटती है। पागल भाग जाता है।

: तो तू काम करेगी, जनता ?

जनता : रोटी मिलेगी ?

पूंजीपति : हां-हां, मिलेगी। अच्छा चल, वहां लेट जा। जितना अधिक मुनाफ़ा देगी, उतनी अधिक रोटियां दूंगा। चल, चलकर लेट जा !

पूंजीपति धीरे-धीरे जनता को लिटाता है और उसे आहिस्ता-आहिस्ता नोंचता है मानो उसके शरीर से धन निकाल रहा हो। जनता चीखती है।

पूंजीपति : पीड़ा होती है, जनता ? पीड़ा सहने का अभ्यास करो। भगवान महावीर, महात्मा गांधी, गौतम बुद्ध—सबका यही कहना है, सहनशील बनो। पीड़ा सहने से मनुष्य महान बनता है।

पागल का प्रवेश।

पागल : ऐऽऽऽ ! इतने सारे पैसे ? धन ? ज़रूर जनता-मंथन से निकला है। ऐ, तोंदूमल ! तू इधर लेट जा। तेरी तोंद बड़ी मोटी है। इसमें से बहुत धन निकलेगा। अबे लेट ! (**डांटता है।**)

पूंजीपति : (**डरते हुए**) पुलिस...पु...लि...स !

पुलिस : (**प्रवेश कर**) क्या हुक्म है, सरकार ? किसको गोली मारनी है ? किसकी चमड़ी उधेड़नी है ?

पूंजीपति : यह पागल क़ानून और व्यवस्था को भंग कर रहा है। जनता को काम करने नहीं देता। देश का उत्पादन रुक गया है।

पुलिस : क्यों बे ! मैं तेरे गांव का हूँ तो क्या हुआ ? साले, सरकार को तंग करेगा तो...!

पागल को मारता है। वह प्याऊं-प्याऊं करता हुआ भाग जाता है।

जनता : भूख लगी है, रोटी दो। वरना मैं मर जाऊंगी।

पूंजीपति : नहीं-नहीं। मैं तुझे मरने नहीं दूंगा। रोटी खायेगी ?

जनता : तो क्या, तुझे खाऊंगी ?

पूंजीपति : कितनी रोटियां खायेगी ?

जनता : आठ।

पूंजीपति : आऽऽऽठ ! हे ह, ये ले...। (**उसकी तरफ़ रोटी फेंकता है।**)

जनता : (**जल्दी-जल्दी खाकर**) और दो।

पूंजीपति : और चाहिए तो फिर लेट जा।

पूंजीपति फिर उसे नोंचता है। दो बार नोंचने के बाद तीसरी बार जनता गिरा देती है।

पूँजीपति : यह क्या करती है ? अभी मैं गिर जाता तो...!

पागल : (**आकर**) यदि तू गिर जाता तो ये तेरे ऊपर चढ़ जाती और तेरे तोंद से सारा धन निकाल लेती।

जनता : अब मैं थक गयी हूँ। मैं भूखी हूँ। मुझे रोटी दो। खाकर सोऊँगी।

पूँजीपति : अभी सोने का वक़्त नहीं हुआ है। रोटी के लिए तो अभी और काम करना है। ऐ पागल, तू भाग यहाँ से ! बुलाऊँ क्या पुलिस को ?

पागल कोने में खड़ा हो जाता है।

जनता : रोटी नहीं देंगे तो मैं कल से काम पर नहीं आऊँगी।

पूँजीपति : यानी तू हड़ताल करेगी ?

पागल : (**कोने से खिसककर आता है**) हड़ताल ! हड़ताल ! रेल हड़ताल... जूट हड़ताल...भूख हड़ताल...आसाम बंद...बिहार बंद ! (**जनता से**) जनता, तू हड़ताल करेगी ? इन्क़लाब ज़िंदाबाद... पूँजीशाही हो बरबाद...!

पूँजीपति : पुलिस...पुलिस...!

पुलिस : (**प्रवेश कर**) हुक्म कीजिये, सरकार ! कौन हड़ताल करता है ? कौन जुलूस निकाल रहा है ?

पूँजीपति : जनता हड़ताल कर रही है। जनता काम पर आने से इनकार करती है। पागल लोग जनता को भड़का रहे हैं। राष्ट्र, देश, समाज—सब ख़तरे में हैं। सिंहासन ख़तरे में है। जनता को संभालो। संभालो जनता को !

पुलिस : जनता की ऐसी की तैसी ! नमक सरकार का खाता हूँ तो तलवे क्या जनता के चाटूँगा ? अभी देखता हूँ, कैसी बेहूदी जनता है और कैसा साला पागल !

पागल को भगाती है। फिर जनता को पीटती है। जनता बिलखती है।

जनता : मुझे मत मारो। मैं काम करूँगी। मैं काम करूँगी।

पूँजीपति और पुलिस जनता को पटककर नोंचते हैं। दो बार नोंचने पर तीसरे में जनता दोनों को गिराती है। दोनों उठकर पीटते हैं।

जनता : मुझे मत मारो, हत्यारो ! मुझे मत मारो। मैं थक गयी हूँ। मैं भूखी हूँ। मैं सरकार से तुम्हारी शिकायत करूँगी। सरकार मेरी है, वह तुम्हें सज़ा देगी।

सरकार का प्रवेश। जनता उसकी तरफ़ देखती है।

जनता : सरकार ! मेरी अन्नदाता, माई बाप ! (**पैरों पर गिरती है।**)

सरकार : शांति क्यों भंग हुई ? चुनाव के वक़्त जनता को कौन सता रहा है ? जनता चीख़ी क्यों ?

जनता : हुज़ूर, ये हमें मारते हैं।

सरकार : क्या बात हुई, करोड़ीमलजी ?

पूँजीपति : जनता काम पर आने से इनकार करती है। राष्ट्र का क्या होगा ? उत्पादन नहीं होगा तो सिंहासन ख़तरे में पड़ जायेगा।

सरकार : (**पूँजीपति को एक किनारे ले जाकर फुसफुसाकर कहती है**) कुछ नहीं होगा। मैं सब-कुछ ठीक कर लूँगा। क्या बात हुई, जनता ?

जनता के पास आती है।

जनता : सरकार, ये मुझे भर-पेट रोटी नहीं देते और ऊपर से मारते हैं।

सरकार : देख जनता, जब तक समाजवाद नहीं आ जाता तब तक तो तुझे कष्ट उठाना ही होगा। तू समाजवाद लाने में मुझे सहयोग दे।

जनता : मैं तैयार हूँ, सरकार !

सरकार : तो थोड़ा कष्ट और उठा—अपनी सरकार के लिए, अपने देश के लिए, उज्ज्वल भविष्य के लिए। और सबसे बढ़कर समाजवाद के लिए। थोड़ी देर और लेट जा। इस बार हम देश के पूँजीपतियों पर कड़ी नज़र रखेंगे।

पूँजीपति और सरकार दोनों जनता को गिराकर नोंचते हैं। जनता कुछ देर चीख़ती है, फिर झटका देकर दोनों को पटक देती है।

जनता : (**चीख़ते हुए**) मुझे नहीं चाहिए ऐसा समाजवाद। हत्यारो ! तुम मेरी जान ले लोगे।

सरकार : क्या तू मेरी भी बात नहीं मानेगी, जनता ?

जनता : नहीं, कभी नहीं ! तू भी इन पूँजीपतियों से ही मिली हुई है। तू भी इन हत्यारों को ही मानती है।

सरकार : क्या तू पागल हो गयी है ?

जनता : (**ज़ोर से**) हाँ-हाँ, मैं पागल ही अच्छी ! तुम लोगों के बहकावे में नहीं आऊँगी। मैं काम नहीं करूँगी।

सरकार : नहीं करेगी काम ?

जनता : (**पागल की तरह**) नहीं...नहीं...नहीं...!

सरकार : करोड़ीमलजी, यह क्या ?

पूँजीपति : लगता है, जनता पागल हो गयी है।

सरकार : तो फिर उसका इलाज करना होगा ।

पूँजीपति : कौन-सा इलाज ?

सरकार : वही जो पागल कुत्तों का किया जाता है ।

पूँजीपति : यानी कि...।

सरकार : लाठी । गोली ।

जनता : (**आवेश में आकर**) खूब चलाओ लाठी, गोली । लेकिन मैं हरगिज़ काम नहीं करूँगी ।

सरकार : अरे, ये तो सचमुच पागल हो गयी है ।

पूँजीपति : हाँ-हाँ, पागल हो गयी है ।

दोनों : (**भय से**) जनता पागल हो गयी है...जनता पागल हो गयी है...!

भयभीत होकर सरकार, पूँजीपति और पुलिस गोल में तेज़ी से इधर-उधर भागने की कोशिश करते हैं । जनता दृढ़ भाव से उनकी ओर बढ़ती है । इसी क्रम में सब-के-सब फ्रीज्ड ।

□ □